यात्रा

यात्रा

साने गुरुजी

भूमिका

११ जून १९५० के दिन महाराष्ट्र की एक महान् विभूति साने गुरुजी का देहावसान हुआ। महाराष्ट्र की सन्त परम्परा में साने गुरुजी भी एक सन्त थे। महाराष्ट्र के जीवन का एक भी अंग ऐसा नहीं, जिस पर साने गुरुजी की छाप न पड़ी हो। संकुचित प्रान्तवाद, जातिवाद, धर्मवाद को दूर करने के लिये उन्होंने अविश्रान्त प्रयत्न किया। 'निर्माण और निष्ठा' उनके जीवन का सूत्र था। इसी निष्ठा से प्रेरित हो उन्होंने शौचालय, रास्ते और गटर साफ़ करने के लिये हाथ में झाड़ू उठाई और विचारों का मनोमालिन्य नष्ट करने के लिये क़लम उठाई।

साने गुरुजी का जन्म एक निर्धन परिवार में हुआ था। जीवन के प्रति उदार दृष्टि, उन्हें, अपनी माता की ओर से मिली। माता से ही अनन्त संस्कार प्राप्त हुए। मातृ-प्रेम ने ही उनमें भारतमाता के प्रति प्रेम जगाया और यही आगे चल कर जगन्माता के प्रेम में परिणत हुआ। इसी मातृभक्ति से उन्हें मातृशक्ति अर्थात् दूसरों से समरस होने की शक्ति मिली। दूसरों के दुःख से दुःखी हो उनका दुःख दूर करने का मातृ हृदय उन्हें मिला था। दुःख दारीद्य को देख कर उनका हृदय रो उठता था! अन्याय के विरुद्ध वे प्राण देने को तत्पर रहते थे। जनता के प्रति करुणा कर्तव्य से प्रेरित हो, उन्होंने जन सेवा कार्य अपनाया।

साने गुरुजी आदर्श त्रिमूर्ति थे। सर्वत्र समभाव देखनेवाले रामकृष्ण परमहंस, कलोपासक रवीन्द्र और सेवामूर्ति गांधीजी के संदेश का उनके जीवन में एकीकरण हुआ था। अपने एक लेख में उन्होंने लिखा है कि लेखनी के लालित्य की अपेक्षा में झाड़ू के लालित्य का उपासक हूं। मेरे जीवन में लेखनी, झाड़ू और जाति-निरपेक्ष-वृत्ति का अनुभव करने की उत्कटता ये तीन वृत्तियां हैं। इन तीनों का थोड़ा सा भी अंश मिलने पर मैं मस्त हो जाता हूं। लेखनी रवीन्द्र की, झाड़ू गाँधीजी की और जाति-निरपेक्ष-वृत्ति रामकृष्ण का प्रतीक थी। साने गुरुजी की जीवन-दृष्टि ऐसी ही थी !

इसी दृष्टिकोण के कारण वे किसी के शिष्य नहीं बने, और न ही किसी एक पक्ष के साथ रहे। उनका मार्ग स्वतंत्र था। वे सन्त थे। स्थापित जड़-मार्ग पर चलने वाले न थे। समाज-कल्याण के लिये अर्वाचीन और प्राचीन का समन्वय करते वे कभी न हिचकिचाये। रूस के किसान-मज़दूर आन्दोलन से वे प्रभावित हुए। इंग्लैण्ड का विचार-स्वातंत्र्य उन्हें प्रिय था और भारत की सहिष्णुता उन्हें आवश्य प्रतीत हुई। उनका कहना था कि भारतीय संस्कृत का महासागर नए नए प्रयोगों से वना हुआ है और इसको यथावत् रखने के लिये नए नए प्रयोगों की ज़रूरत है।

साने गुरुजी का यह उपन्यास ऐसा ही एक प्रयोग चित्र है आर्थिक और सामाजिक समता स्थापित करने का नया प्रयो है। साने गुरुजी का जीवन, या लेखन में कहीं विध्वंसक वृ नहीं दिखाई देती। विधायक वृत्ति का ही उन्होंने पोषण कि

है देश की जड़ता दूर करने के लिये उन्होंने एक विधायक प्रयोग हमारे सामने प्रस्तुत किया। इसी ध्येय तक पहुंचने वाली यात्रा का, इसमें, वर्णन है। पूंजीवाद को समाप्त करते हुए सामूहिक खेती द्वारा अन्न की समस्या को सुलझाने का इसमें प्रयत्न किया गया है। गांधीवादी मार्ग-द्वारा पूंजीवाद को नष्ट करने का, समाजवादी कार्यक्रम इस में सफल रूप में दिखाया गया है। मजदूर और किसानों को नई दृष्टि से पूंजीपतियों की सहायता के विना संगठित करके, विध्वंसक कार्य के बदले, विधायक कार्यक्रम की ओर अभिमुख होना है। जिस देश ने अद्वैत की कल्पना की, उस देश में इतनी असमानता कैसी? इस असमानता को दूर करने के लिये अद्वैत को बुद्धि से कर्म में लाना चाहिये। आर्थिक अद्वैत के लिये समाजवाद चाहिये। इस अद्वैत की प्राप्ति के लिये रूस में अपनी हुई भाग्न में भी सबको समानता देनी है, विचार स्वातंत्र्य भी देना है। इसके लिये नये प्रयोग की आवश्यकता है। यह प्रयोग सत्याग्रह मार्ग द्वारा, अहिंसक साधनों से उपलब्ध होगा साने गुरुजी ने यही मार्ग अपनाया है।

आज साने गुरुजी हमारे बीच में नहीं हैं। लेकिन जीवन के प्रति उनका उदार व्यापक हार्दिक और समानतावादी दृष्टि कोण जीवित है। उनके साहित्य में वही सर्वत्र दृष्टि गोचर होता है। यह दृष्टि कोण जब हमारे अपने और समस्त भारत के जीवन में प्रकाशित होगा तो साने गुरुजी का स्वप्न साकार हो जाएगा और पंचशील की अमर आधार शिला पर नए भारत की नवरचना होगी।

प्रस्तुत उपन्यास इसी दिशा में एक कदम है। चरण चिन्ह है। साने गुरुजी के इस कदम को हमें आगे बढ़ाना है। दिशा उन्होंने दी है, दशा हमें प्रस्तुत करनी है। 'यात्रा' इसका एक उदाहरण है। सत्य के साधन के लिये यह एक सम्बल सिद्ध होगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

मैंने प्रस्तुत अनुवाद में साने गुरुजी के भावों और विचारों को यथावत् रखने का प्रयत्न किया है। मेरी कोशिश रही है कि मूल आशय और प्रयोग रक्षित रहें। फिर भी कोई त्रुटि हो तो पाठक क्षमा करें। ऐसी त्रुटि मेरी त्रुटि, न कि मूल लेखक साने गुरुजी की

रंजन परमार

स खा रा म

छुक छुक छुक करते हुए रेलगाड़ी ने स्टेशन में प्रवेश किया। यों देखा जाय तो सुन्दरपुर का स्टेशन बहुत बड़ा न था। लेकिन उसमें हमेशा भीड़ रहा करती थी। और आज तो फिर दासगांवका साप्ताहिक बाजार जो था। इसी गाड़ी से छोटे बड़े सभी व्यापारी दासगांव जाते थे। और अन्यत्र भी आसपास के गांवों में लोग जाया करते थे। अतः हमेशा की अपेक्षा आज स्टेशन में ज्यादा भीड़ थी। केले, संतरे, चिवडा आदि खाद्य पदार्थ व फल बेचनेवालों की भीड़ थी। अखबार, मासिक पत्रिकादि की बिक्री करने वाले भी इस भीड़ में दृष्टीगोचर हो रहे थे। चाय के हॉटेल के पास काफी तादाद में लोगों की भीड़ थी। गाड़ी का आगमन होते ही सबकी दौड़-धूप शुरू हो गयी। हिन्दू चाय, मुस्लिम चाय, सोडा लेमन, सिगारेट आदि विविध प्रकार के स्वर कर्णपटल से टकराने लगे। कुलीगण पंक्तिबद्ध खड़े प्रवासियों की ओर निहार रहे थे कि कहीं किसी के पास बोझ है अथवा नहीं। स्टेशन के बारह से ही तांगेवाले चिल्ला रहे थे—"है क्या, तांगा चाहिये क्या, आइये तांगा हाजिर है बैठिये"

ऐसी भीड़ में देखी न वह एक विचित्र मूर्ति। वह भी सब प्रवासियों की तरह इसी गाड़ी से उतरी है। और वेश भी क्या तो एक खादी का अंगोछा और बदन पर खादी की एक बंडी (जॉकेट)। सिर पर टोपी न थी। हाथ में सिर्फ एक थैली थी और कंधे पर काले रंग का ऊनी कम्बल। ऊंचा पूरा, दुबला पतला व्यक्ति नाक पर ऐनक थी। मुंह पर अदम्य उत्साह और ओंठो पर मन्द स्मित खेल रहा था। उस भीड़ में वह तरुण व्यवित क्षण भर खड़ा रहा। आसपास में दृष्टि दौड़ाई। और फिर भीड़ में से रास्ता निकालता टिकट देने के हेतु फाटक पर आया स्टेशन के अधिकारी को दे, वह बाहर आया।

"मालिक, तांगा चाहिये क्या मालिक ?"

"अहो महाराज, कहाँ जाइयेगा ?" संस्कृति में जाना है क्या ? आईये, मठ में जाना है क्या महाराज ?" तांगेवालों ने तरुण को चारो ओर से घेर लिया।

"मुझे तांगे की कोई आश्यकता नहीं" युवक ने ठंडे दिल से उत्तर दिया। थोड़ी देर तक सर्वत्र शांति छा गयी, तब उसने वहाँ खड़े एक सज्जन से पूछा, "भारतीय संस्कृति मन्दिर यहाँ कहाँ होगा भला ?"

"इस तरफ से जाइये। फिर बायीं ओर मुड़िये। आगे नदी है और उसी के किनारे वह इमारत है। दिखाई देगी ही तुम्हें। गाड़ी में से तुमको वह संस्था दिखाई नहीं दी ?"

"गाड़ी में कमाल की भीड़ थी। किसी तरह खड़ा भ था। अच्छाजी। नमस्ते।" कह, युवक वहाँ से शीघ्र गति क़दम उठता चला गया। वह देखिये नदी और नदी कि

पर स्थित गगन चुम्बी भारतीय संस्कृति मन्दिर की आलीशान ईमारत। युवक संस्था के दरवाजे तक पहुंचा। बाहर एक बड़ी तख्ती लगी हुई थी। युवक ने संस्कृति-मन्दिर में प्रवेश किया तो अन्दर सुन्दर छोटी सी बगिया के दर्शन हुए। दोनों ओर फव्वारों की हारमाला थी और बीच-बीच में ऊंचे वृक्ष। और आगे जाने पर युवक को एक तरफ 'व्यवस्थापक-कार्यालय' तख्ती दिखाई दी। उसने कार्यालय में प्रवेश किया। वहां पर एक सज्जन उपस्थित थे। शायद वे ही स्वयं व्यवस्थापक होंगे।

"नमस्ते"

"नमस्ते, बैठिये"। व्यवस्थापकजी ने स्वागत करते हुए कहा। मैंने आप की संस्था में प्रवेश पाने के लिये दरख्वास्त दी थी। चूंकि मुझे सब संस्कृतियों का अध्ययन करना है। यहां से स्वीकृति-दर्शक पत्र भी मुझे मिला था। यह देखिये वह पत्र।" उसने अपनी जेबमे से निकाल संस्था का पत्र व्यवस्थापक महोदयजी को बताया।

"क्या आप ही सखाराम हैं?"

"जी हां मैं ही हूं।"

"अच्छा। आपको जीविकोपार्जन के लिये प्रति माह ३० रुपये मिलेंगे। यहां पर निःसंकोच, बिना किसी रोक-टोक के अध्ययन कीजिये।

"मुझे ज्यादा (अधिक) रुपयों की कुछ आवश्यकता नहीं।" सखारामने शांत चित्त से उत्तर दिया।

"चलिये, आपका कमरा दिखा दूं।"

सखाराम को उसका कमरा दिखा दिया गया । तत्पश्चात् व्यवस्थापक महोदय अपने काम से चले गये । संस्था के अन्य विद्यार्थी व प्राध्यपक–वर्ग ने उसे घेर लिया । प्रसंगोपात् उनमें वात-चीत भी हुई ।

"यहां पर क्लव है, उसमें भोजन करने आईयेगा । अरे हां यह रही मेरी वालटी—और देखिये वह रहा पानी का हौज़ । वहां स्नान करने की सव व्यवस्था है ।" एक युवक ने सखाराम को विना पूछे सव वातें वता दीं ।

"आपका शुभ नाम ?" सखाराम ने घड़ी भर शांत रहकर पूछा "मुझे सव घना के नाम से संवोधित करते हैं । घनश्याम मेरा पूरा नाम है । 'और आपका'

"सखाराम" ।

"वाह, क्या ही अच्छा नाम ! सव का सखा वननेवाला राम । सव का मित्र वनने में गौरवानुभव करने वाला राम । मुझे वचपन से ही सखाराम नाम वहुत ही प्यारा लगता है । आप थक गये होंगे । मैं वालटी ले आता हूं । पहले स्नान कर लीजिये । और फ़िर विश्राम कीजिये । भोजन में अभी देर है । आज छुट्टी जो है ।"

"आज किस वात की छुट्टी ?"

"जिस व्यक्ति विशेष की प्रेरणा से इस संस्था स्थापना करने में आयी उनका श्राद्ध दिन है आज ।" इ कह घना अपने कमरे की ओर चला गया । थोड़ी देर पश्चात् वालटी हाथ में लिये पुनः लौटा और उसने सख को पानी का हौज, पाखाना आदि सव दिखा दिया ।

"आप अब जाइये। मैं अभी सब से निवृत्त हो आता हूं। आपको देख मुझे ऐसा प्रतीत होता है, मानो हम कोई वर्षों पुराने मित्र हों।" सखाराम ने मधुर हास्य करते हुए घना से कहा।

घना चला गया। सखाराम बहुत देर तक स्नान का मजा लेता रहा। वह काफी लम्बी मुसाफिरी कर आया था। बीच में दो दिन तक स्नान करने का मौक़ा ही न मिला। कपड़े घोये और फिर अपने कमरे में आया। थैली में से डोरी निकाल एक तरफ़ बांधी और उस पर कपड़े सुखाये। कमरे में एक टेबल पर आवश्यक दो-चार पुस्तकें सजा दीं। पुस्तकों में एक तुकाराम की गाथा थी, उपनिषद और रविन्द्रनाथ टागोर की 'साधना' व 'गीतांजली' भी थी। आश्रम भजनावली व गीता ये दो और छोटी पुस्तिकाएं थीं। साथ में श्रीरामकृष्ण परमहंस की तस्वीर भी थी जिसे उसने टेबल के मध्य में क़रीने से रखा और बगिया में से दो-तीन ताज़े फूल लाकर उसे श्रद्धानत हो समर्पित किये। फिर फर्श पर एक तरफ़ कंबल बिछा, शरीर को लंबा किया। अल्प समय के पश्चात् उसकी आंख लग गयी।

घना जब सखाराम के कमरे में आया तब वह निद्रितावस्था में था। वह चुपचाप वहां एक कुर्सी पर बैठ गया और पुस्तकें उलट-पुलट करने लगा। साधना में तो स्वयं खो गया। इतने में भोजन की घंटी बज उठी। सखाराम जग गया।

"चलिये, भोजन करने ?" घना ने कहा।

"चलिये।" सखारामने उत्तर दिया।

क्लब में दस-बारह व्यक्ति खानेवाले थे। एक रसोईया भी था। और अन्य काम के लिये एक नौकर भी था, जिसे सब गणा कहकर पुकारते थे। गणा का बड़ा लड़का कस्बे की मिल में काम करता था। और छोटा लड़का रुपल्या दस-बारह वर्ष का था, जो अभी तक कोई काम नहीं करता था। रुपल्या गणा की आँख का तारा था। रुपल्या भी वहीं पर काम किया करता था। और बाप-बेटे दोनों इस भाँति क्लब में बचे-खुचे भोजन पर अपना भी निर्वाह चलाते थे।

"बैठिये, सखाराम!" घना ने कहा।

दोनो मित्र आखिरकार पास पास में भोजन करने बैठे। भोजन करने वालों में कोई बंगाली, कोई गुजराती, एक मद्रासी, कुछ महाराष्ट्रीय और एक कन्नड बंधु था। मानो वह अखिल भारतीय संमेलन ही था।

"नूतन बंधुर नाकी?" बंगाली ने पूछा।

"नामटी एकटु सखाराम!" सखाराम ने हँसते हुए जवाब दिया।

"बंगला जानते पारी?"

"किछु, किछु"

सब के मुंह पर हास्य रश्मियां बिखर गयी थीं। अचानक सखाराम को ठसका लगा।

"पानी लीजिये, पानी लीजिये किसी ने कहा।"

"तन्नी कुडी।" मद्रासी मित्रने कहा।"

"कुडच्याची!" पानी पीकर सखाराम ने जवाब दिया।

"आप तो हर एक प्रांत की भाषा जानते हैं ऐसा मालूम पड़ता हैं।" एक उत्तर प्रदेशी ने कहा।

मैं तो भारत का यात्री हूँ। आज इतने दिन घूमता हूँ। अल्मोड़ा से कन्या-कुमारी तक घूमा। आज यहां आया हूँ।" सखाराम ने सब की ओर ताकते हुए कहा।

"समाधान बाहर कहीं नहीं मिलता। समाधान मन का एक धर्म है। मन की वृत्ति है। इधर उधर मिलने वाली यह चीज नहीं। तो भी स्थान महात्म्य का असर होता है। सत्संग का परिणाम होता वही मैं देखूंगा सखाराम ने कहा।

भोजनोपरांत सखाराम अपने कमरे में चला गया। "आपको लौंग चाहिये?" धना ने आकर पूछा।

"नहीं तो।"

आप सो जाइये। मुसाफ़िरी की थकावट होगी। कहां से आये?"

"मद्रास की ओर से"।

"थकावट के मारे शरीर चूर चूर हो गया होगा। दोपहर में सभा है। मैं उठाऊंगा।"

"इस संस्था की स्थापना तो सुंदरदास ने ही की है न?"

लेकिन उन्हें प्रेरणा देने वाले एक सीधे साधे गृहस्थ थे। उन का नाम था रामजी मास्टर। स्वयं रामजी मास्टर बड़े वेदान्ती साथ ही सितार वादन कला में तज्ञ भी थे। सुंदरदास को बचपन में वे सिखानें के हेतु घर जाया करते थे। और फिर उन्होंनें ही सुंदरदास को अध्यात्म-विद्या का रसिक भी बनाया। धर्म, तत्त्वज्ञान व भारतीय संस्कृति का गहनाध्ययन कर उसकी

ष्ठता समझ सके इसी हेतु वश उन्होंने सुंदरदास को यह संस्था स्थापन करने की प्रेरणा दी थी। पहले इस संस्था में विद्यार्थियों को भी प्रविष्ट किया जाता था। लेकिन आज कल प्रथा वंद हो गयी है। अव सिर्फ एम. ए. आदि उच्च परीक्षोत्तीर्णों को ही फेलो बना लिया जाता है। वे परस्पर चर्चा करते हैं– अभ्यास करते हैं और संशोधन भी। सुंदरदास स्वयं चर्चा में सम्मिलित होने आते हैं। वे अध्यात्मशाली हैं। लेकिन उनका अध्यात्म मुझे अच्छा नहीं लगता।"

"मैं हिन्दुस्तान का कोना, कोना घूमफिर कर इधर आया हूँ। और यहां भी कितने दिन टिक रहूंगा हरि जाने।"

"आप ज़रा सोइये, मैं जाता हूँ।"

घना चला गया। सखाराम लेट गया। लेकिन वह अपने विचारों में खो गया। घना के लिये उस के हृदय में प्रेम रस प्रवाहित होने लगा। क्या इसके लिये मैं यहां आया? अपने जीवन के संबंध कहाँ से किस तरह निर्माण होते हैं, कुछ ध्यान में नहीं आता, इन्हीं विचारों की उलझन में वह सो गया।

तीसरे पहर संस्था के वड़े आलीशान हॉल में रामजी मास्टर के श्राद्ध दिन के निमित्त सभा होने वाली थी। रामजी मास्टर के तेलचित्र को पुष्प हार अर्पण किया गया। सुंदरदास सेठ स्वयं उपस्थित थे। उन्होंने अपने भाषण में कहा– "रामजी मास्टर का प्रभाव मेरे जीवन पर हमेशा के लिये पड़ा है। जिस कार्य में हाथ डाला, वह पूरा करना चाहिये यह शिक्षा उन्होंने मुझे दी है। वचपन में मुझे एक शब्द ठीक तरह लिखना नहीं आता था, उन्होंने वही शब्द एक नहीं दो नहीं वल्कि पच्ची

मर्तबा लिखवाया। लेकिन उनका मुझ पर सब से बड़ा उपकार है। वेदान्त के प्रति आकृष्ट करना, उसका रसिक बनाना। संसार में प्रचलित अन्य सब तत्वज्ञान की अपेक्षा वेदान्त श्रेष्ठ है। ऐसा वे प्रायः कहा करते थे। उनकी ही प्रेरणा व स्फूर्ति के परिणाम स्वरूप इस संस्था की स्थापना करने में आयी है। विवेकानंद जैसे जगत प्रसिद्ध महापुरुष यह संस्था देखें - ऐसी उनकी मनीषा थी। वे स्वयं निस्पृह थे। मैंने एक समय उनसे कहा, "आप मुझसे कुछ मांगते तो मैं अवश्य दे देता। लेकिन वे तो निःस्वार्थ वृत्ति के थे।" मृत्यु समय उन्होंने कहा – "देह मुक्त भया राम।" मानो आत्मा के चारों तरफ लिपटा बंधन टूट गया। उसी संस्था के आप सब हैं और संस्था आपकी है। आप सब धर्म, सर्व तत्वज्ञान व सभी प्रकार की संस्कृति का अध्ययन करें। लेकिन हमारी संस्कृति में जिस अद्वैत की सुगंध भरी पड़ी है, उसी अद्वैत तत्वज्ञान को सर्वत्र फलाइये – ले जाइये। उनका गगन भेदी जयघोष कीजिये।"

सुंदरदास का इस तरह व्याख्यान हुआ और भी दूसरों के हुए! सभा समाप्त हुई। सेठजी ने सखाराम की पूछ-ताछ की और कहा, "आपके जैसे तपस्वी इस संस्था को चाहिये। यहां खुशी से रहिये। अध्ययन कीजिये। और आपको समाधान प्राप्त हो।

"आपको तो समाधान है ना?" सखाराम ने प्रश्न किया।

"यह कैसे कहूं?"

"मेरा अध्यात्म अलग ढंग का है। मैं वेदांत उसीको मानता हूं कि हमने कुछ भी कार्य किया तो भी हमारी आत्मा

से पूर्ण रूप से अलग है ऐसा विचार मन में रात-दिन वनाये लेना। कर्म सत्कार हो अथवा दुष्कर्म, उस से आत्मा मैली नहीं होती। आत्मा का स्थान सत् और असत् के दायरे से बाहर का है।"

यह तत्त्वज्ञान भयंकर है। साधु संतों की साधना क्या व्यर्थ थी? अद्वैत का जिन्होंने अनुभव प्राप्त किया है इस भांति कभी भी नहीं वरतते थे। उनके जीवनपर से अगर वेदान्त समझ लेना हो तो फिर आप कहते हैं उसका उस से मिलाप कैसे किया जाय? शंकराचार्य रचित भाष्य के प्रारंभ में ही कहा गया है कि शम, दम आदि सद्गुण हमारे हुए बिना कहां का वेदांत? कहां का अद्वैत?"

"आप अभी इस क्षेत्र में दुध-मुंहे वच्चे हैं वच्चे।"

"मुझे वच्चों ने ही रहनें दीजिये।" ऐसा कह वंदन कर सखाराम वहां से चला गया। संस्था प्रमुख को सुंदरदास सेठने कहा "यह युवक अलग वृत्ति का लगता है। यह अन्यों के समान सिर्फ चर्चाराम नहीं लगता।

— — —

उस दिन सखाराम और घना वहुत दूर तक घूमनें गये थे। नदी के बीचोंबीच स्थिति एक शिला पर दोनो मित्र वैठे हुए थे। नदी का पानी स्फटिक-मणि-ता श्वेत वस्त्र धारण किये कल-कल करता वह रहा था। शरद् रितु का साम्राज्य जगत पर छाया हुआ था। संध्या समय चित्ताकर्षक गंभीर प्रकाश जल-रानी के निकट कीड़ा कर रहा था। सूर्य रश्मियां संध्याकालीन स्न... समाप्त कर अस्ताचलकी ओर गमन की तैयारियां करने मग्न दृष्टिगोचर हो रही थीं।

" घना, चारों तरफ़ से जल हो और बीच में यह शिला है उसी तरह जीवन में सर्वत्र निंदा, स्तुति स्पर्धा मानापमान के वेगवान प्रवाह बहते हुए भी हमारे लिये ऐसा एकाध अटल, अचलस्थिर आधार होना चाहिये। जहां हम इन सब बातों से संरक्षण पा सके वहां हम परम शांति का अनुभव कर सकें।" सखाराम ने नदी के बहते प्रवाह में गहराई की एक दृष्टि डालते हुए कहा।

और ऐसा आधार यानी सब चराचरों से एकता अनुभव करना, अलगतावाद की बात ही जड़ मूल से नष्ट करना। हमें अपना मन क्षण भर के लिये भी इस सारे जंजाल व्याप से अलिप्त रखना और सर्व विश्व से मूल भूत ऐक्य भावना का निर्माण करना चाहिये।" घना ने कहा।

"परन्तु आंतरिक ऐक्यका अनुभव करना भी कोई सीधी सरल बात नहीं। बाह्यजीवन में भी उस की अनुभूति होना परम आवश्यक है। मैंने अपने कमरे में गणा को सोने के लिये कहा तो अन्य पंडित हंसने लगे। बारिश जोर की हो रही थी, गणा की टूटी-फूटी मड़ैया अंतिम श्वास ले रही थी। अतः मैंने उसे बुला कर कहा, "मेरे कमरे में सोजाओ, आओ।" रुपल्या को मैं पढ़ाता हूं, वह उन्हें फूटी आँख नहीं सुहाता। रुपल्या मेरे खाट पर बैठा चित्र की कापी देखता है तो उनका जी ऊपर नीचे होने लगता है।"

"कालेज से एम. ए. की सब से उच्च डिग्री हासिल कर आने वाला यह वर्ग। इन्हें ग़रीबों से समरस होना अभी मालूम नहीं है"।

और ये ही क्या संस्कृति एवं वेदान्त के अभ्यासी गण ?"

" जैसे सेठजी ठीक वैसे यह सब। सुंदरदास वेदान्त के नाम से सुप्रसिद्ध हैं साथ ही दानेश्वर भी। लेकिन मिल में रात-दिन खून का पानी करने वाले मज़दूरों से लिये वे कुछ भी नहीं करेंगे। उनके खून की गाढ़ी कमाई अन्य संस्थाओं को दे देंगे, लेकिन कठिन परिश्रम करने वाले मज़दूर और उनके बाल बच्चों के लिये सुन्दर-स्वच्छ बस्ती कदापि नहीं बसायेंगे। अरे इतना ही क्यों? वह राममंदिर उन्होंने लाखों रुपये खर्च करके बनवाया है न ? लेकिन अभी तक वहां हरिजनों को दर्शन कर लिये प्रवेश नहीं मिलता। कपास के बड़े बड़े व्यापारियों के किसानों की एक दफ़ा संयुक्त सभा थी। वहां व्यापारी और किसानों के प्रतिनिधि बैठे दर निश्चित करते हैं। अन्य लोग सभा में ठीक समय पर उपस्थित हुए मगर सुन्दरदास ज़रा विलंब से आये। उनके लिये सभा में एक रिक्त कुर्सी रख दी गयी। लेकिन सब किसानों को वहां कुर्सियोंपर बैठे देख कर वे नीचे ही बैठ गये गुस्से के मारे।

" सेठजी ऊपर बैठिये, यह कुर्सी आप के लिये ही खाली रखी है। " सब ने एक स्वर से आग्रह किया तो झट बोल उठे

" इन गंवारों के साथ के नहीं बैठूंगा, हाँ !"

मानों गवार तो नीचे बैठने की सी योग्यता के है पुनिचै वश्य पाकेच पंडित समदर्शितः, गीता में ऐसी एक पं है न सुन्दरदासने कहा–' पंडित सर्वत्र समदर्शी होते हैं समन नहीं। सब एक ही स्तरपर निर्वाह करने वाले मिले तो उनके व्यवहार समान कैसे रखे जाए ? गाय की खुराक

हमें खानी चाहिए ? गाय को चारा ही चाहिये । और हमें तो अनाज ।" इसी तरह यही वात एक कदम आगे वढ़े तो धनिकों को आलीशान वंगले ही चाहिए और दीनो को सिर्फ़ झोपड़ी टूटी फूटी मडैया । फिर तो धनिक वर्ग कुर्सी और अन्य ऊंचे ऊंचे आसनों का अधिकारी हो गया और गरीव वेचारे को उनसे दूर वैठ मक्खियाँ ही मारनी होगी इसी सिद्धांत पर हम आते हैं । ऐसा है इनका तत्वज्ञान । और वे कहते भी तो हैं कि हम कैसा भी क्यों न वर्ताव करें लेकिन आत्मा का उस वर्ताव से ज़रा भी संवन्ध नहीं ऐसी भावना सतत हृदय में रहनी चाहिये । यही मुक्ति-मोक्ष है । लेकिन ये तो सव शव्द ही हुये । उनका कथन ऐसा है कि आत्मज्ञान होने पर भी पूर्व संस्कार कहाँ जायेंगे ? वे तुम्हें किसी न किसी तरह खींच ही लेंगे । आत्मज्ञान से हृदय में रही गन्दगी हमेशा के लिये साफ़ हो जाती है, जीवन में नव क्रांति का उद्गम होता है ऐसा तो वे स्वीकार ही नहीं करते ।"

सखाराम चुपचाप वैठा सुन रहा था । मित्रद्वय अब बिलकुल शांत थे । अचानक सखाराम ने प्रश्न किया ।

"क्या रे धना मजदूरी की तनख़्वाह में से इस संस्था के लिये रकम ली जाती है—क्या ठीक वात है ? उस दिन एक ने मुझ पर व्यंग कसा था कि गरीवों के लिये आप के मन में इतनी सहानुभूति है तो गरीवों की रकम पर निर्वाह क्यों कर रहे हैं ?

"मिल मजदूरों की तनख़्वाह में से प्रति रुपया एक पहले ली जाती थी अवश्य । लेकिन वर्तमान में ली

थवा नहीं यह मालूम नहीं है। मजदूर स्वेच्छा से प्रति रुपया
ायी प्रदान करता है—ऐसा लिखवा लिया जाता था। प्रति
रुपया एक पायी के अनुपात से भी प्रति माह ८००–६००
रुपयों की बड़ी राशि इकट्ठी होती थी और वर्षान्त में लगभग
दस हजार रुपये मजदूरों के आते थे संस्था में। इस भाँति गत
दस वर्ष लगातार पैसे लिये गये। अर्थात इस लंबी अवधि में
मजदूरों ने करीब एक लाख रुपये दिये कहिये न। इस विषय
पर किसी अज्ञात व्यक्तिने अखबारों में लेख माला प्रारंभ की
थी। लेकीन सुना है कि अखबार वाले की जेब गर्म कर लेख
माला बंद कर दी गयी। मुझे तो सिर्फ़ इतनी ही जानकारी है।"

"घना तो फ़िर मैं इस संस्था में किस लिये रहूं ?
मजदूरों के लिये हम कुछ भी नहीं करते। न तो हम उनके
लिये रात्रि–पाठशालाएं चलाते हैं न ही उनका कोई संगठन
भी करते हैं। मेरी तो ऐसी पहले से वृत्ति ही नहीं है। मैं
झाड़ू हाथ में ले स्वच्छता करने का कार्य करूंगा। लेकिन अन्य
मुझ से न होगा। मेरा यहाँ पर न रहना ही अच्छा है। यहाँ
रहना यानी पाप करना अछी हो मेरी आत्मा रात-दिन पुकारती
रहेगी।"

"मैं तुम्हें क्या कहूं भला ? यहाँ से कहाँ जाओगे ?"

कहां जाऊं ? आत्मा को चिरशांति मिलेगी इस आशय से
सारे भारत का पैदल–भ्रमण किया। विवेकानंद के आश्रम में
गया, अल्मोड़ा की भी मुलाकात की, वेल्लूर भी गया, रविंद्रनाथ
टागोर द्वारा स्थापित विश्व भारती भी देखी, अरविंदबाबू के
आश्रम की खाक भी छान आया। वे सब महान आत्मायें होंगी

लेकिन इन बड़ी संस्थाओं में मेरे जैसे को कहाँ स्थान ? वहां योरप अमेरिका से जिज्ञासु आते हैं, उनका कैसा वढ़िया प्रबंध हैं। लेकिन उसी पांड़ेचरी के आश्रम में मैं रोते जैसा होगया। ऐसा लगा कि ये सब आश्रम सिर्फ़ विज्ञापन बाज़ी हैं। अरविंदबाबू को मेरे शतश: प्रणाप ! वे इतनी लंबी अविधि से एकांत वास कर रहे हैं और हम पांच मिनट भी एक स्थान पर शांति से बैठ नहीं सकते। लेकिन उस आश्रम के बाह्य व्यवस्थापक ! वहां गरीबों को कौन पूछता है ? बड़ी बड़ी संस्थाओं में भी सूक्ष्म दृष्टि ड़ालने से मुझे संकुचितता के दर्शन हुए। एक बड़ी संस्था में गया, वहां एक शास्त्री थे। मैं रहँट के पास खड़ा था। उन्होंने कहा, "कुएं में गागर डुबो कर रखिये, फिर मैं निकाल दूंगा।" उन्हें क्या मेरी छूत लगती थी ? एक जगह गया तो वहां मेरे साथ कोई सीधे मुंह बात करने के लिये भी तैयार नहीं। कहने लगे यह तो काम करने का समय है। अरे, एक अनभिज्ञ अभ्यागत आप की संस्था में आता है क्या उस की सहानुभूती से पूछ-ताछ भी नहीं करनी चाहिये ? क्षणभर अपना काम एक तरफ रख दीजिये ! घना, मैं तो तंग आ गया बड़ों के ऐसे व्यवहार से। हो सकता है कि मैं टीकाकार की दृष्टी से अवलोकन करने वाला हूंगा, वृत्तपत्रों में नित्य प्रति दिन बड़े बड़े लेख आते हैं। लेकिन नजदीक जाने पर मृगजल-सा लगता है कहां जाऊं मैं ? इस संस्था में स्थायी होने के दृढ़निश्चय के आया तो यहां के अद्वैत का अलग ही अवतार ! मैं घर जाऊंगा। आज बारह वर्ष व्यतीत हो गये मैं घर नहीं गया। मेरे बड़े भैया सब का

लन पोषन करने होंगे। उन्हें उन के कार्य में सहायता दूंगा पना सब कुछ त्याग व्यर्थ में ही दूसरों के पीछे क्यों पड़ू ?"

"घर में कौन कौन हैं तुम्हारे ?"

"बड़े भैय्या और उन की सुशील पत्नी, मेरी भाभी। अब तो बाल-बच्चे भी होंगे। एक मेरे बाद वाली बहन वो घर त्याग के समय सात आठ वर्ष की थी। शायद उसकी शादी भी हो गयी होगी। पिताजी की मृत्यु कभी की हो गयी। मां है। वह मेरे लिये गले में प्राण रोके जिंदा होगी। जीवित होगी अथवा नहीं यह भी क्या मालूम ? मैं घर ही जाऊंगा। मां भारती का दर्शन, पैदल भ्रमन से कर लिया है। अब जन्मदात्री के दर्शनार्थ जाऊंगा। उस की सेवा में ही भारत मां की सेवा का समावेश हो जायेगा।"

"तुम्हे यहां रहना जो हृदयशूल बनता हो तो यहाँ तुम्हारा जाना ही इष्ट है।"

हाँ-हाँ मेरा जाना इष्ट है। घना, तुम्हारा परिचय यहाँ मिला, और हममें मित्रता हो गई। पत्र लिखते रहना !"

"तुम जाओगे और मैं यहाँ रहूँगा ? मेरी भी क्या आवश्यकता ? तुम्हारे जैसा धैर्य, तीव्रता मुझमें बिलकुल नहीं। हम कौन कहांके ? थोड़े दिन साथ रहे। क्या इतना ही संबन्ध था। और कुछ भी अर्थ नहीं हमारे मिलन में ?"

"प्रभु जाने।"

अंधकार सर्वत्र छाने लगा था। रात्रि-रानी मंदगतिसे पृथ्वी देव के जीवन में प्रवेश कर रही थी। दोनों मित्र अपनी जगह से उठे। घुटने घुटने तक पानी में बाहर आयें। दोनों

हाथ परस्पर के एक दूसरे के हाथ में थे। मित्र द्वय संस्था में आये। अन्य सब के भोजन होकर गये थे। शेष घना और सखाराम ही बचे थे।

"क्यों रे रुपल्या, भोजन हो गया ?" सखाराम ने पूछा।

"आप भोजन कीजिये, फिर मैं कर लूंगा।" उसने कहा।

"अरे, हमारे साथ ही बैठ जा। आ।"

"नहीं दादा, मैं बाद में बैठूंगा।"

आखिरकार घना और सखाराम दोनो ही बैठे। रुपल्या वहां से भाग गया। दोनो मित्र भोजन कर अपने-अपने कमरे में गये। घना अपने कमरे में बैठा पुस्तक पढ़ता रहा और सखाराम विकसित बगीचे में तुकाराम महाराज का एक अभंग गुनगुनाता आसन जमा बैठा था। रात रानी की मोहक तरल सुगंध से सारा वातावरण सजीव हो उठा।

० ० ०

आज शाम की गाड़ी से सखाराम इस संस्था को छोड़ अपने घर जानेवाला था। उसके सम्मान में क्लब के सहकारियों की तरफ से भोजन दिया जाने वाला था। घना ने सारी तैयारी की थी। केले के पत्ते, रागोली के स्फूर्तिदायक चित्र, पूरा ठाठ था। लेकिन ऐन समय पर रंग में भंग हो गया।

"मेरे निकट रुपल्या को बैठने दो।" सखारामने कहा।

"हम ऐसे नहीं खायेंगे उसकी हमारी पंगत में क्या आवश्यकता। आप जानबूझकर हमें भ्रष्ट क्यों करते हैं ? बड़े समदर्शी हैं, हमें क्या मालूम नहीं ? हम बड़ी खुशी से आप के

सम्मान में भोज देने निकले तो आप उस नालायक नीच को भोज के समय अपने पास ले हमारा अपमान करेंगे !" एक पदवीधरी ने कुपित हो सखाराम से कहा ।

" इसमें अपमान की बात ही क्या है ? मेरा उसपर प्रेम है, मैं उसे नित्य पढ़ाता हूँ । उसके शरीर पर खादी का स्फटिक सा सफेद शर्ट है । क्या वह गंदा है ? हमारे ही तो ये सब बन्धु हैं । सारे देश में स्वाधीनता प्राप्ति के हेतु विदेशी सरकार से मोर्चे लिये जा रहे हैं और यहाँ अपने को शिक्षित कहलवाने में गौरव समझनेवाले आप सब इस बच्चे को भोजन समय पास बैठाने तक तो तैयार नहीं । आप प्रथम भोजन कर लीजिये । मैं आपकी पंगत में न बैठूंगा । मैं रुपल्या के साथ बाद में भोजन करूंगा । आप सब उच्च कुलीन व्यक्ति पहले बैठ जाइये ।"

आखिरकार घना व सखाराम भोजन करने के हेतु सब के बाद बैठे । बाकी सब पहले ही भोजन कर चले गये थे । गणा रुपल्या आदि दूसरे सखाराम के साथ भोजन करने बैठे ।

सखाराम और घना भोजनोपरान्त काफी देर तक चर्चा करते रहे । गाड़ी का समय होनेपर मित्रद्वय स्टेशन जाने के लिये संस्था से निकल पड़े । सामान तो कोई था ही नहीं । सिर्फ थैली और कम्बल । सुन्दरपुर स्टेशन में आज बहुत भीड़ थी । आम तौरपर शाम की गाड़ी में हमेशा भीड़ हुआ करती थी । गाड़ी आ गयी । वह घ र्र र्र र्र करती रुकी । घनाने एक डिब्बे में चढ़ सखाराम के लिये बैठने की जगह प्राप्त की । सखाराम भी डिब्बे में बैठा इतने में तो रुपल्या और उसके वृद्ध पित गणा भी विदा करने वहाँ आये ।

"दादा ये फूल लीजिये।" रुपल्या ने कहा।

"गरीबोंपर मेहर नज़र रखना।" गणा ने धीरे से कहा।

"गणा मेहरबानी तो प्रभु की है। हम सब एक दूसरों को कब तक साथ दे सकेंगे भला? तुम्हारा रुपल्या बड़ा होगा और और मोल में जाया करेगा। तुम्हें किसी चीज़ की कमी न होने देगा। और रुपल्या गणा की देखभाल करना।"

"आप वापिस कब लौटेंगे दादा? आपकी याद हमें नित सताया करेगी। आपकी नाईं मुझे कौन पढ़ायगा? कौन तस्वीरोंकी पुस्तकें देगा?" रुपल्या की आँखें डबडबा गयीं।

"यह घना यहीं पर है। यह तुझे सब सिखायेगा। होशियार बनना। अच्छा लड़का बनना।" सखाराम ने आशिर्वाद देते हुए कहा।

गाड़ी के छूटने का समय हो गया। सखाराम ने घना की ओर प्यार भरकर देखा। सखराम ने घना की आखों में आसुओं के रुपमें उमडे कितनेही अरमान व उर्मियोंके दर्शन किये।

"सखाराम, पत्रोतर देते रहना और भविष्य का क्या कार्यक्रम है इस की भी सूचना देना। यहां पर जिस तरह तुम्हारे व मेरे बीच मित्रता की गांठ बँधी है, वह जीवन भर अटूट रहे। कभी कभी अचानक अनजान मनुष्य परस्पर एक दूसरे के संपर्क में आते हैं। लेकिन वे ऐसे हिल मिल जाते हैं, मानो शत जन्मों से परस्पर पहचानते हों। मानो एक दूसरे की खोज में ही निकले हों। लेकिन उन्हें इसकी कोई जानकारी नहीं होती। तुम क्या मुझे खोजने ही निकले थे। तुम्हारे मेरे संबंध कैसे निर्माण हुए? जन्म-जन्मान्तर का कोई अदृश्य रिश्ता

घना स्थिर दृष्टि से निहार रहा था। जाती हुई गाड़ी को चुपचाप। वह दुःखी था। रुपल्या व गणा कभी के चले गये थे। अकेला घना मंद गति से कदम उठाता नदी किनारे की तरफ प्रस्थान कर गया। वह विचार सागर में तन्मय हो गोते लगा रहा था। सखाराम आया और चला गया, मुझे क्यों न जाना चाहिये? यह प्रश्न बार बार उसके हृदय को रह रह कर मथ रहा था। लेकिन वह जायेगा कहाँ? कितनी ही देरतक चुपचाप नदी तटपर आसन जमाये बैठा रहा। इतने में ही नदी में से जाते हुए किसी के धड़ाम् से गिरने की आवाज आयी। वह एक वृद्ध था। घना शीघ्र ही उसकी ओर दौड़ पड़ा। उसने वृद्ध को सहारा दे खड़ा किया उसके मस्तक पर का जो सामान पानी में गिर गया था, वह उसने उठा लिया।

"भीग गया होगा" वृद्ध ने क्षीण स्वर में कहा।

"हाँ बाबा चलिये। उस पार आपको ले चलता हूं।" घनाने बाबा को सहारा दे उस पार पहुंचाया। बोझा उनके सिरपर रखा। वृद्ध चला गया। घनाके मन को अतिशयानंद प्राप्त हुआ। उसके मन में रही खिन्नता न जाने कहा उड़ गयी। क्षण भर ही सही लेकिन जीवन का उपयोग तो हुआ। नीबीड़ अंधकार में भी प्रकाश की छोटीसी किरण आशा का संदेश सुनाती है। स्वतः के जीवन का उपयोग क्या? इस संसार में ऐसे विचार रह रह कर घनाके मन में उठ रहे थे, कि किसी मोहताज अपाहिज के उपयोगी बनने का स्वर्ण अवसर हाथ लगा। घनाको किसी कवि की एक पंक्ति स्मरण हो

ग्रायी । "किसी की जीवन कली विकसित करने के हेतु यदि तुम्हारा कोई उपयोग हो सके, तो मान लो तुम्हारा जीवन सार्थक हो गया । घना ग्रानन्द विभोर हो अपने कमरे में चला गया ।

जल प्रवाह की तरह समय तो वहता ही गया । लगातार पिछले सतत विचारों परांत घनाने अनुभव किया कि इस संस्था के ग्राधार पर उसे जीवन निर्वाह नहीं करना चाहिये । तनख्वाह ग्रवश्य लेता हूं । लेकिन संसार को मेरा क्या उपयोग ? यहां हम निश्चित हो तत्वज्ञान की चर्चा में रात दिन व्यतीत करते हैं । लेकिन किन के प्राणों पर हम वैचारिक ग्रानन्द का मजा लूटते है ? जिनके प्राणों पर हम जीते हैं वड़े ग्रंथ उपर नीचे करते है, विविध संस्कृति व तत्वज्ञान की ड़ींग हांकना उन्ही के ग्रंधकार मय जीवन को उत्साह स्फूर्ति से प्रकाशमय करने की कभी कोशिश करते हैं क्या ? यहां की मिल में सख्त परिश्रम करने वाले मजदूरों के पसीने की कमाई पर यह संस्था जल रही है । सुन्दरदास सेठजीने संस्था के लिये दान अवश्य दिया । लेकिन वह दान आया कहां से ? मजदूरों के अधिक परिश्रम के पश्चात् प्राप्त निधी ही तो उनके पास होती है । फिर मजदूर वर्ग के लिये वे क्या करते हैं ? जिनके पसीने की कमाईमें से वे मन चाहा धर्म, पुण्य, दान कर सकते हैं । आश्रमों को भेंट देते हैं; उनके लिये वे सुन्दर स्वच्छ मकानो का निर्माण क्यों न करें ? उनके वेतन में दो प्रतिशत भी वृद्धि कर दें तो कितना अच्छा होगा । उन्हें विमारी में सवैतनिक छुटी दे दें तो खुदाकी कसम ! जव चाहा

काम पर से निकाल दिया और रख दिया। मिल में भी जब चाहा, ताले लगा दिये। इन मालकों की मनमानी से लाखों मजदूरों की जानें, जीवन मृत्यु के बीच झोंके खाती होंगी। और उनकी लहर यानी जहर है जहर कालकूट ! छिः यह सब अन्याय है। मुझे यहां पर नहीं रहना चाहिये। लेकिन जाऊं कहां ? मैं यहीं पर क्यों न रह जाऊं ? यहां के कृषक-मजदूरों का संगठन क्यों न करूं ? यहां के विद्यार्थी वर्ग में क्यों न नव-चैतन्य की अखंड ज्योति जला दूं ? ऐसे कई विचार उसके हृदय सिंधु में नित्य उठा करते थे। वह बेचैन था। तन से नहीं बल्कि मन से विचारों से। कुछ निश्चय ही न होता था।

लेकिन एक दिन तड़के ही उसने त्याग-पत्र पेश किया संस्था के व्यवस्थापक के पास और सब से विदा ली।

"आप कहां जायेंगे मालिक ?" गणाने पूछा।

"मैंने सुन्दरपुर में ही एक कमरा किराये पर ले लिया है, वहीं रहूंगा। सुन्दरपुर में ही मैं स्वाधीन रहूंगा। मजदूरों में संगठन कार्य करूंगा। हम सब मिलते ही रहेंगे।" उसने प्रेमपूर्वक उत्तर दिया। रूपल्या भी दौड़ा आया। उसने कहा।

"क्यों भैया आप भी चले ? वे चले। अब भी जाने लगें। क्या यह सच है कि आपको यहां रहना नहीं भाता ?"

"रूपला अब से मैं कस्बे में ही रहूंगा लेकिन यहां नहीं। मेरे कमरे पर आते रहना।" धनाने कहा। फिर एक त्यागी ने अपनी छोटी सी ट्रंक-बिस्तर उठा। संस्था के सब कार्यकर्ताओं को सादर व सप्रेम अंतिम विदाई नमस्कार किया। और चल पड़ा मंजिल की ओर। जाओ धना तुम भी जाओ। शैल-शक्तियों

तुम्हारे जीवन का उत्तरार्ध की सेवा शुश्रूषा के लिये जाओ। तुम्हारे मार्ग में कदम कदम पर प्रारंभ होने दो। लेकिन तुम्हारे मार्ग में कदम कदम पर उपहास, अपमान और मुश्किलों के ढ़ेर लगे हुए हैं। निराशा तुम्हें आशासे दूर करने के लिये घेर लेगी। सर्वत्र अंधकार का साम्राज्य छा जायेगा। लेकिन दूरदर्शिता को नित्य अपने साथ रख कर्तव्य बुद्धि से निरंतर आगे की ओर कूच करना। परिणाम अच्छा अथवा बुरा आये परवाह न करना। लेकिन तुम अपने प्रयत्न, कोशिशें कभी न छोड़ना भले ही जानपर आन पड़े।

घ र

लंबे अर्से के पश्चात् सखाराम अपने घर पुनः लौटा था। सखाराम का गांव छोटा सा तहसील का गांव था। लेकिन रेल्वे की वजह से अपने आसपास के क्षेत्र में विशिष्ट स्थान भी रखता था। उसके दीर्घकाल पश्चात् पुनः आगमन से घर में मां, भाई, आनंदित हो उठे। लेकिन सखाराम की दृष्टि तो छोटी बहन को खोज रही थी। वह कहीं न दिखाई दी। उससे वह छोटी थी। बचपन में ही उसकी शादी हो गयी थी। लेकिन विधि के कठोर हाथों ने बेचारी की मांग का सिंदूर दो ही वर्षों में नोच लिया था। पति के पश्चात् ससुराल में उसको नाना प्रकार के कष्टों का सामना करना पड़ता था, अतः वह मैके ही रहती थी। सखाराम को रह-रहकर बहन की याद रुलाने लगी। बीते दिनों की कई छोटी बहन की स्मृतियां एक के बाद एक उसकी आंखों के सामने आने लगीं। उसकी ससुराल गांव में ही थी। एक मर्तबा बड़े भैया बहन को ले ससुराल गये। विधवा बहन को ससुराल में रखा। लेकिन बड़े भैया के पीठ फेरते ही वह भी उसके पीछे होली। भैया ने आव देखा न ताव, और ताड़कन् उसके मुंह पर तमाचा जड़ दिया।

"कहाँ आती हो, रोती-चिल्लाती? हमारे मुंह पर कालिख

तना चाहती हो क्या ? ससुराल में ही रहो।" भैया न दुःखित
ृदय से उसे डांटते हुए कहा।"

"मैं प्राण तक दे दूंगी दादा। लेकिन उस नरक में मत
रखो।" वह जैसे दीन बन गयी थी।

"ले जाओ अपनी वहन को—कुलच्छनी को यहां से। आते
ही पति को खा गयी और न मालूम अब किसकी बारी है।
जान देकर क्या हमारे गले फाँसी का फंदा डलवायेगी? लेजाओ
अपनी वहन को।" उसकी सास लाल—पीली होकर बोल
रही थी।

अड़ौसी-पड़ोसियों ने भी 'ले जाओ अपनी बहन को' ऐसी
ही सलाह दी। और भैया उसे घर ले आये। पुनः वह कभी
ससुराल न गयी। लेकिन मरते दम तक उसने सुख की
सांस न ली। मालती ने उसकी अन्त तक की अवस्था का वर्णन
किया। क्षयी बन उसने इस असार संसार से बिदा ली थी।
लेकिन अपनी थूक को वह स्वयं किसी जगह दूर जा गढ़े में
डालती थी कभी भूल कर भी उसने किसी से अपना काम न
करवाया। वह स्वयं अपना सारा काम करती थी। सखाराम
प्रायः मां से उसके पुनर्विवाह से बारे में कहा करता लेकिन
सनातनी ख्यालात में गर्दनतक डूबी बूढ़ी को इसमें से एक बात
भी अच्छी नहीं लगती थी। सखाराम वहन के वैधव्य-दुःख से
तंग आ गया था। लेकिन मजबूर था। फिर तो वह स्वयं घर
से चला गया था वर्षों तक। घर से चले जाने के बाद पुनः
आगमन तक उसे अपने संबंधी व घर के विषय में एक शब्द
भी मालूम न हुआ था। और घर आया तो वहन अदृश्य।
उसे प्रायः वहन की आत्मा उसके चारों ओर घूमती फिरती

प्रतीत होती। घर में क्या आज तक उसकी आत्मा उसके लिये तड़प रही थी।

लेकिन सखाराम शांत था। उसने अपने दिमाग का संतुलन न खोया। जब वह घर त्याग कर चला गया था तब मालती सिर्फ आठ-दस वर्ष की ही थी। लेकिन अब तो वह भी अठारह बीस वर्ष की जवान बन गयी थी। उसे हरेक बात अच्छी तरह से ज्ञात होने लगी थी। उस बहन की शादी तो पिताजी ने बचपन में ही कर दी थी। और फिर तो उसके जीवन चमन में दुःख के ऐसे छोले बरसे कि अन्त में उसे यमराज की ही शरण लेनी पड़ी थी। अतः भैया ने इसे आगे पढ़ा कर सुशिक्षित बनाने की मन में ठानी थी। सखाराम प्रायः पिता जी के बारे में यही कहा करता था कि अगर वे रहते तो वे अवश्य ऐसा ही करते लेकिन उन्हें यमदेव ने कुटुम्ब से उठा लिया था। तब से मां प्रायः दुःखी रहा करती थी। लेकिन दुःख पर समय जैसा रामबाण दूसरा इलाज भी नहीं। धीरे धीरे-वह शोक भूलने लगीं। घर गृहस्थी में मन लगाने लगी। सखाराम के घर त्याग से एक बार फिर उसे दुःख का जबरदस्त धक्का लगा था। वह पुनः घर लौट आये इस हेतु प्रायः वह जप-तप किया करती थीं। और मानो उसके पूजन-अर्चन से ही प्रसन्न हो ईश्वर ने वरदान दिया जिससे बारह वर्ष की लंबी अवधि के पश्चात् अचानक एक दिन सखाराम घर लौट गया।

सखाराम के घर लौट आने से सब के मुंह पर आनंद की लहर दौड़ आयी थी। सब के चित आनन्दोन्मत्त हो नाच रहे थे। भैया किसी दूकान में नौकरी करते थे। छोटा सा वाड तो उनकी अपनी पैतृक संपत्ति थी। घर के ठीक पीछे एक कुआं

था और उसके पास में अमरूद का पेड़। सखाराम की आंखों के आगे वचपन की एक स्मृति शीघ्र ही प्रकट हुई। वहन कितनी क्रोधि हो उठी थी जव उसे असरूद के पेड़ पर से उसके लिये एक भी अमरूद फेंका न था।

"भैया, यह चन्दन का पेड़। दीदी ने अपने हाथ से लगाया था और वही इसे सींचा भी करती थी। मेरी मृत्यु के पश्चात् यही मेरी स्मृति को सव के हृदय में ताजी रखेगा ऐसा प्रायः वह कहा करती थी। मृत्यु के दिन भी उसने कहा था– "पौधे को सींचा क्या?" मालती कंठावरुद्ध हो जाने को वजह से एक एक शब्द मुश्किल से वोलती, सखाराम को चंदन-पौधे की उत्पत्ति-कथा कह रही थी।

सखाराम वक्त-वेवक्त उस चंदन के पौधे की तरफ एक टक हो निहारा ही करता मानो अपनी लाडली वहन इस पौधे के स्वरूप में साक्षात् उसके समक्ष ही खड़ी है।

घर के सूने वातावरण में, भाभी के दो वच्चे ही प्रायः सखाराम के मनोरंजन के साधन थे। जयंत छः सात वर्ष का था और पारवी तीन वर्ष की। सिर्फ दो ही वच्चे। घर लौटे चाचा के इर्द गिर्द दिन भर नाचते–कूदते और फुदकते रहते।

"आप हमारे चाचाजी? इतने दिन कहां थे?" जयन्त प्रायः पूछा करता।

"चाचा, दादी वारवार रो रही थी।"

"रोती न होंगी–आँखें मल रही होंगी।" सखाराम उनसे कहता

"नहीं नहीं सचमुच रो रही थी। उसे कोई कुछ कहत

नहीं, मारता नहीं, फिर चाचा वह क्यों रोती है भला?" जयन्त ने पूछा।

"मैं पूछूंगा दादी से। समझे जयन्त, अच्छा यह तो बता तेरे अध्यापकजी भी हैं?" "एक दफे उन्होंने छड़ी मारी थी। चाचा, हमारे अध्यापक हैं तो लेकिन मारते हैं जोरसे। फिर तो मैं रो पड़ा।"

"उन्होंने तुझे क्यों मारा था भला?"

"अपने साथी के साथ बोल रहा था इसलिये।"

"कौन है तेरा साथी?"

"वही बाळशा, कल हमारे यहां नहीं आया था क्या? वृक्ष पर वह गिलहरी-सा शीघ्र गतिसे चढ़ता है। वह बेर के पेड़ पर भी चढ़ता है, लेकिन मजाल है जो एक कांटा भी चुभ जाये। वृक्ष पर चढ़ वह वृक्ष हिलाता भी खूब है। हम सब नीचे रह बेर इकट्ठे करते हैं। अध्यपकजी उसे भी खूब पीटते हैं। एक मर्तबा तो उसकी जेब में से बेर निकले अतः बहुत पीटा अध्यापकजी ने और सारे बेर सड़क पर फेंक दिये। चाचा, बेर खराब होते हैं क्या?"

"अरे, राम को शबरी ने बेर ही तो दिये थे।"

"झूटे ना? दाँतोंसे तोड़े हुये। पक्षियोंने दाँतोंसे कुतरे होंगे। ठीक है न चाचा?"

इतने ही में पारवी ने गाते गाते प्रवेश किया।

"चाचा पारवी आई।" जयन्तने कहा।

वह आते ही चाचा की गोद में बैठ गयी। तालियों से ताल देती वह धीमें स्वर में कोई गीत गुनगुना रही थी।

"चाचा, दही विषयक गीत सुनाइये ना?"

"तुम्हें दही भाता है पारवी ?" सखारामने पूछा ।

"जी हाँ, और उस में शक्कर ।"

"पारवी लोभी है चाचा ।"

"तू ही लोभी, तू ही कौआ ।"

"पारवी ऐसा न बोल, मैं गीत सुनाऊं ना ?"

"हाँ सुनाओ, अवश्य सुनाओ ।"

सखारामने गीत प्रारंभ किया ।

"यों खेलत मोरी पारवी' ऐसा कहो चाचा" । उसन कहा ।

"तेरा नाम क्यों, मेरा चाहिये ।" जयन्त ने कहा ।

"तू बड़ा है और मैं छोटी । मेरा ही नाम चाहिये। क्यों चाचा ?" पारवी ने अपने दोनों छोटे करों को सखाराम के गले में डालते हुए कहा ।

"क्यों नहीं, क्यों नहीं ? जयन्त, तुम पाठशाला जाओ ।" सखाराम ने कहा । जयन्त पाठशाला चला गया । और पारवी खेलते खेलते वहीं चाचा के निकट सो गयी । भाभी भी रसोइ-घर का सारा काम काज पूरा कर जरा लेट गयी थी । मालती सिलाइ वर्ग में गयी थी ।

सखाराम अन्दर जा मां के पास बैठा । फिलहाल मां की तबियत अच्छी न थी, मानो वह करुणा की मूर्ति रह-रहकर सखाराम का ही इन्तजार कर रही थी । लेकिन उसके सिर पर एक और चिन्ता सवार थी; और वह थी मालती की शादी की।

"माँ, तुम आज रो रही थी ?" उसने धीरे से पूछा ।

"कभी कभी आंखें भर आती हैं । वे तो कभी के हम सबको रोता-बिलखता छोड़ राम की शरण में चले गये और

मुझे तड़पाने के लिये पिछे छोड़ गये। यह शोक मानो कम था अतः तेरी बहन भी चली गयी। तड़प तड़प कर बेचारी ने प्राण दिये। वह रात-दिन तेरा स्मरण कर कहा करती कि जहां कहीं भी हो, मेरा भैया सुख में रहे। लेकिन खैर, जाने दे बीती बातों को.। लेकिन अब मालती का क्या होगा यही चिन्ता रात-दिन मुझे खाये जाती है। व्यर्थमें ही दादाने इसे उच्च शिक्षा दिलायी। हमारे समाज में शिक्षित युवक हैं ही कहां ? कौन इस की मंगनी करेगा ? नाक की बनिस्बत मोती भारी, यही तो हर कोई कहेगा। मैं तो पहले से ही कहती रही कि दो किताबें सिखा दीं तो काफी हो गया। लेकिन तेरा भाई मेरी बात माने तब ना। तू भी तो प्रायः ऐसा ही कहा करता था। तू तो चुपचाप मां-बाप के वात्सल्य को गढ़े में डालकर चल दिया घर से और उसके पास समय नहीं है और समय मिल तो भी कहां से। इतना बड़ा कुटुम्ब और कमाने वाला एक। मालती आखिरकार और कितने दिन यों रहेगी।" माँ, अपना दुःख बेटे के सामने प्रकट कर रही थी।

"माँ, समय आयेगा तब सब ठीक होगा। और बिना शादी-ब्याह किये वह ऐसी ही कुमारी का रह गयी तो क्या बिगड़ेगा ? कहीं भी रचनात्मक कार्य करेगी सेवाश्रम प्रारंभ करेगी। हमारे देश के कोने कोने से यही पुकार है कि कार्यकर्ता कार्यकर्तियां चाहिये, जो अपने जीवन की बलि देकर देशकल्याणार्थ घर बार को तज दें। छोटे-मोटे गांवों की महिलाओं में कार्य करने के लिये कार्यकर्ताओं की सख्त आवश्यकता है।" सखाराम कह रहा था मां से।

"शादी के बाद काम करने दो। तुम्हारे प्रेरक महात्मा

ांधी जी ने शादी नही की थीं क्या ? शादी के विना भला कोई रहता है ? व्यवहारानुसार सव होना चाहिये । तुम वम्वई-पूना की तरफ जाग्रो, कहीं से भी गुणवान, शीलवान, वुद्धिमान्, एकाध लड़का ढूंढ कर लाओ।" मां कह रही थी।

और सचमुच एक दिन सखाराम ने पूना की तरफ प्रयाण किया। वर्षों पुराने सहपाठियों से उसकी मुलाकातें हुईं। वहुतों की शादियां हो गई थीं तो वहुतों के जीवन प्रांगण में नन्हें मुन्हें क्रीड़ा कर रहे थे। वहन के लिये वर देखें भी तो कहां? वह अलग-अलग छात्रालयों में जा कर जांच करता। छात्रा वर्ग उसके आगमन का रहस्य समझ परस्पर मुस्कराते हुये काना-फूसी करते दृष्ट गोचर होते। लेकिन सखाराम था सीधा-साधा और भोला-भाला। वह यह सब चुपचाप सहन करता था। एक जगह पर उसे एक एसे तरुण का पता मिला जो बॅरिस्टर वनने के लिए विलायत जाने वाला था। उनके घर की पूछ-ताछ करते करते वह वहां पहुंचा तरुण अभी घर पर ही था। वह आराम कुर्सी पर बैठा सिगार पी रहा था।

"नमस्कार!" सखाराम ने कहा।

"Good-Morning (गुड मॉर्निंग)।" तरुण ने प्रत्युत्तर दिया।

"आपकी पूछ-ताछ करने के लिये मैं आया हूं,। चन्द वातें पूछ सकता हूं।"

"हाँ, हाँ, अवश्य पूछिये। क्यों नहीं?"

"आपकी शादी करने की मनीषा है ऐसा सुना है मैंने। मेरी वहन शादी के योग्य है।"

"शिक्षण है क्या?"

"मैट्रिक तक शिक्षण हुआ है।"

"वाह बहुत ही अच्छा! हमारे समाज में शिक्षित लड़कियां हैं ही कहां? अरे, कल तो मैं बॅरिस्टर या आइ.सी.एस. अफ़सर बनूंगा। ऊंचे पदों पर आसन्न व्यक्ति मेरे यहां आयेंगे, और मुझे भी तो बड़ों में जाना पड़ेगा, भोजन, पार्टी, समारोहादि अनेक कार्यक्रम में प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से हिस्सा लेना पड़ेगा। सर्वत्र पत्नी को साथ में ले जाना होगा। ऐसी स्थिति में यदि वह मूर्ख, दुर्बल नासमझ हुई तो फायदा ही क्या शादी का? ठीक है न? वाकई आपकी बहन पढ़ी लिखी हैं? यह तो सब ठीक। लेकिन एक शर्त है। मुझे उच्च शिक्षण के लिये विलायत जाना है जो कोई मेरे विलायत जाने का पूरा खर्च अदा करेगा उसीकी कन्या से मैं शादी के सूत्र में बंधूगा। और फिर उस में लड़की की भलाई है। अपनी कन्या के लिये फारेनें रिटर्नड पति मिला तो निश्चय ही मां-बाप को कितना आनन्द होगा! ठीक है ना?"

"आप एक एक मर्तबा बहन को देख तो लीजिये।"

"अरे, इसमें देखने की बात ही क्या है? शिक्षित कन्या और धन भी मिलता हो तो समझिये बिना देखे-सुने वह पसंद।"

"लेकिन मेरी बहन भी आपको भी। परस्पर एक-दूसरे को देख लेना, आपस में बोलना और जो हो वह तय कर लेना अच्छा। पैसे की बात तो फ़िर देख लेंगे।"

"अच्छा, मैं आऊँगा। आपका पता दे दीजिये घरका। आने के पूर्व सूचना दूंगा। अच्छा, मुझे जाना है अभी। बाहर अपॉइन्टमेन्ट हैं। शहर में सब टाइम-टु-टाइम। और मैं रेग्युलर भी हूँ ऐसी बातों में।"

सखाराम ने नमस्कार कर विदा ली। वह घर लौटा। उसने बड़े भैया तथा माँ को सब बातें सविस्तार बतायीं।

"मेरी मानो तो सखाराम, उसके विलायत गमन के पूर्व ही शादी-वादी कर दो। वह एकाध मैडम वहांसे उठा लायगा अपने साथ। पहले एक पाई भी देने का नाम न लो।" माँने कहा।

"माँ, सचमुच मुझे यह शादी नहीं चाहिये। दादा की तिजोरी में जो थोड़ी बहुत रकम होगी वह भी फिजूल बरबाद होगी। और उपर से कर्ज भी लेना पड़ेगा। बिलकुल नहीं। मुझे कहीं भी नौकरी कर भैया के दुःख-दर्द में सहभागी होने दे। इसमें कोई बुराई है क्या? समय आनेपर शादी भी हो ही जायगी।" मालती मां को समझा रही थी।

"मालती, ऐसा न बोल। अगर वे आज जीवित होते तो कितने ठाठ-बाट से तेरी शादी रचाते। तू तो उनकी आँखों की तारा थी; लेकिन वे तो चले गये कभी के। मैं ही अभागिन, फूटे नसीब को रोने के लिये बची रही हूँ अब। एक बार तेरे हाथ पीले हो जायें फिर मैं शांति से आंखें मूंद लूंगी। दादा भी तेरा भाई ही है न? यह घर रखो गिरो। और फिर सखाराम भी तो कमाने लायक होगा। धीरे धीरे साहुकार की रकम अदा होती रहेगी। बहन के चिर-सुख की बनिस्बत क्या भाइयों को चांदी के चंद टुकड़े ज्यादा प्रिय हैं?" मां ने मालती की पीठ सहलाते हुये कहा।

"मां अब मैं भी दादा का बोझ हल्का करने का जी जान से प्रयत्न करूँगा। गिरो रखे घर-बारको छुड़ानें का प्रयत करूँगा। मालती की शादी ठाठ-बाटसे होनी चाहिये।

सखाराम ने माँ को आश्वासन देते हुए कहा ।

मालती को कोई देखने आने वाला है– ऐसी काना-फूसी घर-घाट, चौपालादि गांव के प्रत्येक हिस्से में होने लगी । प्रत्येक ग्रामनिवासी कुतूहलवश ठीक बात क्या है यह जाननेकी कोशिश करने लगा । छोटे गांव में छोटी वार्ता के फैलनें में देर नहीं लगती ।

"चाचा, फूफी को कौन देखने आयेगा ? फूफी की शादी होगी ?" जयन्तने बालसुलभ उत्सुकता से सखाराम को अकेला पा, प्रश्न किया ।

"हाँ बेटा !" सखाराम ने कहा ।

"और चाचा, आपकी शादी कब होगी ? मैं आपका हाथ देखूं ?"

"हाथ में क्या देखना है रे जयन्त ?"

"मुझे सब ज्ञात है । देखूं तो आपका हाथ ।"

"देख ।"

"आपका पत्नी पर प्रेम नहीं । आप के दस बच्चे होंगे, दस । और क्या... मैं तो भूल ही गया ।"

"तुम्हें हाथ देखना किसने सिखाया जयन्त ?"

"हमारी पाठशाला में लड़के एक दूसरे- का हाथ नित्य ही देखते हैं । ऐसा ही कुछ हाथ में होता है ना ? चाचा, फूफी की शादी कब होगी ? फिर तो बेंड, लड्डू, पेढे–मिठाई और भी बहुत कुछ ?"

"फूफी की शादी ऐसी न होगी ।"

"तो फिर कैसे ?"

"बिना बाजे-गाजे के उसकी शादी संपन्न होगी ।"

"नहीं, नहीं ।"

इतने में, जयन्त के कान पर अपनी माँ की आवाज टकराई । वह उसे बुला रही थी । जयन्त चला गया । किसी आवश्यक कार्यवश सखाराम भी बाहर जाने के लिये घरसे अभी निकला ही था कि डाकिये ने एक पत्र उसके हाथ में दे दिया । पत्र और किसी का नहीं बल्कि उस युवक का ही था । वह आज आने वाला था । स्टेशनपर उसकी अगवानी के लिये जाना आवश्यक होगया । उसने युवक के आगवानी की पूर्व सूचना घरमें दे दी । बड़े भैया अच्छी तरकारी लाने के लिये बाज़ार चले गये और सखाराम अगवानी के लिए स्टेशन ।

"मालती, जरा सुन्दर साड़ी परिधान करना । कानो में कर्णफूल डालना न भूलना और कंगन भी हाथ में अच्छे हों ।" माँ ने सस्नेह कहा ।

"माँ, क्या मैं प्रदर्शन की चीज हूँ ?"

"ज़रा मेरी अपनी वृद्धा माँकी भी सुन !"

भीभी ने भी अच्छे से अच्छे वस्त्र-भूषणो से मालती को सजाया और खूब सजाया । मालतीने भी फिर सजने में कमी न की । सचमुच आज वह रूपसौंदर्य की प्रतिनिधि रति-सी लग रही थी । लेकिन उसके लावण्य में करुणा भी छिपी थी, वदनपर खिन्नता और स्वभाव में गंभीरता ।

"आज कौन आनेवाला है माँ ?" जयन्त ने पूछा ।

"फूफी को देखनें आयेंगे । ठीक तरहसे रहना । गड़बड़ धमाल न हो और खबरदार पारवी को रुलाया तो ।"

नन्ही पारवी भी 'फूफी की शादी, फूफी की शादी' गुनगुनाती आंगन में नाच रही थी । "मेरी गुड़िया रानी की

भी शादी में रचाऊंगी। माँ मुझे लड्डू देगी और गुड़िया के लिये कीमती गहने। जरा मनोरंजन भी होगा और आनन्द भी।"

सखाराम जब स्टेशन से लौटा तो साथ में वह युवक भी था। द्वारपर दादा नें स्मित हो कर उसका मौन स्वागत किया। नमस्कार आदि हुए। हस्त–मुख–प्रक्षालनादि विधि पूरी हुई। तब मालती घर में से चाय की प्याली लेकर आयी।

जयन्त ने ताली बजायी।

"जयन्त, अन्दर जा।" दादा गुस्सा होकर बोल उठे।

"यह मेरी बहन।" सखाराम ने मालती का परिचय देते हुए कहा।

"जी हाँ, चाय किसने बनायी, स्वादिष्ट हुई है—बहुत ही स्वादिष्ट। बैठिये, खड़ी क्यों हैं?" युवक ने उसकी तरफ टकटकी लगाते हुए कहा।

"मैं जाती हूँ, घर में काम है।" कह मालती अन्दर चली गयी।

"बड़ी शर्मीली है भाई आपकी बहन।"

"विनय ही नारी का भूषण है।" दादा ने कहा।

"यह सब पुरानी संस्कृति की बातें हैं। नव-संस्कृति में तो विनय ही सब से बड़ा दूषण है। आज के युग में तो हाँ जी करना चाहिये। गप्पें लगानें में दिलचस्पी लेनी चाहिये। मुस्कुराना आवश्यक है। ढिठाई हो, युवक बेभान हो प्रवचन झाड़ने लगा।

स्नानशौचादि आवश्यक कार्य से कभी के सब निवृत्त हो गये थे। सखाराम व दादा देवघर में बैठे देवपूजा कर रहे थे। जयन्त और पारखी युवक को चुपके चुपके दीवार की आड़ से

देख रही थी।

"अरे, ओ यहाँ आओ..." युवक ने आवाज दी और जयन्त सारी हिम्मत इकट्ठी कर बाहर आया।

"तुम्हारा नाम क्या ?"

"जयन्त।"

"बहुत सुन्दर है नाम तो।"

"आप फूफी से शादी करेंगे ?"

"तुम्हें क्या मालूम है बच्चे ?"

"मुझे सब ज्ञात है।"

"आपका हाथ देखूँ ?"

"तुम्हें सिखाया किसने यह सब ?"

"मुझे आता है देखनें दो हाथ।"

उस युवक ने मनोरंजन की खातिर हाथ आगे बढ़ाया और छोकरे ने चेहरेपर गंभीरता लाते हुए कहा, "आपकी शादी न होगी। आपके दस दस बच्चे होंगे कुल दस। और क्या..."

"अरे, शादी न होगी तो बच्चे कहाँ से आयेंगे ?"

"आपके हाथ में ऐसा लिखा है। हमारी पाठशाला के लड़के हाथ देख प्रायः यों ही कहते हैं।" पारबी भी भय-रहित हो आड़में से बाहर निकल आई। "फफीका दूल्हा काला या गोरा ?" वह कह रही थी।

"मैं तो काला हूं।" युवक ने सस्मित कहा।

"छिः मुआ कहीं का काला।" उसनें नाक भौं सिकुड़ते हुए कहा।

"पारबी–जयन्त, एक दफा कह दिया न ? अन्दर बैठो।" दादा क्रोध से लाल पीले हो पारबी की ओर घूरते हुए बोले

"होशियार है आपके बच्चे।" अभ्यागत ने, मानो कुछ न हुआ ऐसे शांत स्वर में दादा से कहा।

भोजन के लिये सब एक साथ बैठे। कोई किसी से ज्यादा बोलने की स्थिति में न था। सिर्फ विलायत गमोत्सुक वह युवक रह रह कर मालती को घूरता और जरा मुस्कुरा देता। मालती कुछ परोस रही थी, वह इन्कार नहीं कर रहा था। वह और परोस रही थी अपनी तान में।

"अरे अब तो बस। अभी से आग्रह क्यों? फिर करियेगा शांति से। मुझे तो लगा आप स्वयं ही परोसना बंद करेंगी।" युवक निर्लज्ज बन मालती से कह रहा था।

मालती का हंसता चेहरा यकायक क्रोध से तमतमा उठा। क्षण भर तक उसकी यही स्थिति रही, फिर वही चिरपरिचित मुंस्कुराहट की रेखा पुनः उसके चेहरेपर छा गयी। वह समुद्र-सी शांत थी। मानो कुछ हुआ ही नहीं। सबका भोजन पूरा हुआ। पान-बीड़ा अतिथी को दिया गया। पान को मुंह में रख चबाते और सिगार सुलगा धुआँ निकालते हुए युवक महाशय ने आराम कुर्सी में स्थान लिया और कलात्मक धुम्रवलय की ओर निहार वह कृतार्थ दृष्टि से हंस रहा था।

"आप जरा सो जाइए। सारी रात्रि की थकावट होगी। पास के कमरे में सोने की सारी व्यवस्था कर दी गई है।" दादाने कहा।

"आपकी बहन मुझे पसन्द है। सुन्दरता के साथ ही साथ विनय भी प्रचुर मात्रा में इसमें भरी पड़ी है। लेकिन इतनी विनय कल न चलेगी। समय आने पर हंसना होगा-शेकहॅण्ड करना होगा। अन्य बड़े व्यक्तियों से काम पड़ा तो कोई एकाध

जाम भी होठों से लगाना होगा। अपटुडेट रहना आवश्यक है। यह सब अपने आप आयेगा। एक मर्तवा वड़े सर्कल में जाने की देर है फिर तो किससे कैसा वर्ताव करना चाहिये। स्वयं सीख जायगी– उसकी आदी हो जायगी। अच्छा मैं ज़रा आराम कर लूँ।" युवक ने कहा और वह पास के कमरे में जा आराम करने लगा। जयन्त पाठशाला चला गया था पारवी सो गयी थी। वैठक–गृह में दादा व सखाराम आपस में वोल रहे थे। उन्हें युवक की प्रत्येक रीत, चाल–ढाल वोलने चालने का तरीका तिरस्करणीय प्रतीत हो रहा था।

वामकुक्षी के पश्चात् पुनः चाय की प्याली आयी। मालती भी वहीं आकर वैठ गई। परस्पर स्पष्ट शब्दों में निसंकोच वार्तालाप होने लगी। उसने अंग्रेज़ी में प्रश्न पूछा। मालती ने टाईम्स अखवार पढ़ सुनाया। युवक वेहद खुश हुआ। मालती की तीव्र वुद्धि की अनुभव कर उसने कहा, "मैं आपको पसंद हूं क्या? मुझ से जो कुछ पूछना है अवश्य पूछिये।"

"आप खादी परिधान करेंगे?" उसने शांति से पूछा।

"खादी पहन कर मैं वड़ा अफ़सर कैसे वन सकूंगा। तुम उसकी चिंता न करो"।

"आप वड़े अधिकारी वन गये? भविष्य में समस्त देश में स्वाधीनता-संग्राम तो शुरु होगा ही आप अपने ही देशवंधुओं पर वंदूकों की गोलियां चलायेंगे क्या? लाठीमार से उन्हें स्वतंत्रता प्राप्ति पथ से विमुख करेंगे क्या?" उसने प्रश्न किया

"राजनिष्ठा यह तो प्रत्येक सरकारी कर्मचारी का अ धर्म है। मैं लाठीमार गोलावारी के आदेश दूंगा तभी उच्च पद प्राप्त कर सकूंगा। फिर मोटरें मिलेंगी उन में वैठ

रानी सी सर्वत्र फिरेगी।"

"लगता है, आप शराब भी पीते हैं?"

"कभी कभी। लेकिन कल उच्च पद प्राप्त करने पर लेनी ही पड़ेगी। अतः अभी से आदत डाल रहा हूं। और फिर विलायती हवा से अपना संरक्षण करने के लिये शराब लेना ही पड़ेगा। वर्ना मैं मर जाऊंगा। कहते हैं थोड़ी बहुत तो टानिक का काम देती है। लेकिन छोड़ो इन बातों को। मैं तुम्हें पसंद हूं क्या? अवश्य दुबला-पतला हूं लेकिन विलायत में भारी भरकम, मोटा-ताजा बन जाऊंगा और सावला होने पर भी वहां की आबोहवा से गोरा बनूंगा; कहिये"

"दादा से कह दूंगी।" मालती इतना कह वहां से चली गयी।

"कितनी विनीय है यह।" युवक अपने आप बोल उठा।

"विलायत–गमन के लिये आपको कितनी क़रम देनी होगी?" दादा ने पूछा।

"सिर्फ़ पांच हजार। और जो कुछ लगेगा मैं ऋण रूप में दूसरों से लेलूंगा। सारा का सारा बोझ आप अकेले पर नहीं, मैं जो कुछ निर्णय करता हूं काफ़ी सोच विचारके करता हूं।"

"दो दिन के पश्चात् आपको प्रत्युत्तर दूंगा।"

"मुझे एक बात पूछनी है।"

"पूछिये।"

"आपके ये बंधु अभी अविवाहित हैं। उनका विवाह भी हमारे साथ ही साथ हो जाये तो अच्छा रहेगा। मेरी बहन है – ज्यादा लिखी-पढ़ी नहीं और एक आंख से जरा कानी है। जैसी आपको अपनी बहन की चिंता है, ठीक वैसी ही मुझे अपनी

वहन की । मैं आपकी वहन से विवाह करूंगा और ये मेरी
वहन से । विल्कुल सीधी-सादी वात है । वोलिये है मंजूर ?"
"पीछे से सूचित करूंगा ।" दादा ने कहा ।

अतिथि स्टेशन के लिये घर से सखाराम के साथ
रवाना हुआ फिर भी मालती वाहर न आयी । सखाराम
अतिथि को रेल में बिठा कर घर आया। आज घर में शून्यता
का राज्य था कोई भी युवक के बारे में एक शब्द भी बोलना
नहीं चाहता था । सब के चेहरे से एक ही वात प्रकट हो रही
थी और वह उस युवक के प्रति उनके हृदय में घृणा हो रही
थी । सब तंग आगये थे उसके व्यहार से ।

"सखाराम, आखिर क्या सोचा तुम सब ने ?" मां ने पूछा

"लगभग सब सोचा हुआ ही है।" उसने प्रत्युत्तर दिया।

"अच्छा ही हुआ । अब मैं शादी की अवधि तक प्रत्यक्ष
रूप में जीवित न रही तो भी कुछ वात नहीं । एक बोझ तो
कम हुआ । पिछले दो दिनो से मेरा जी कहीं भी नहीं लगता ।
ऐसा प्रतीत होता है कि इस मायावी संसार से सदा के लिये
विदा हो जाऊं ।" मां ने संतोष व्यक्त करते हुए कहा ।

मां, तुम मालती की चिन्ता न करो । सब ठीक होगा ।
दिन आयगा तब मालती अपने सुखी संसार में फूलेगी । मैं
तुम्हें वचन देता हूं कि जब तक मालती को अच्छा घर और
वर न ला दूं तबतक कहीं न जाऊंगा ।" सखाराम ने मां को
आश्वासन देते हुए कहा ।

सचमुच उस दिन से मां ने बिछौना न छोड़ा । उसने चिर
परिचित शैया से ही मित्रता कर ली । मालती रात दिन विना
कुछ खाये पिये मां की शैया के पास मौन बैठी रहती । और म

अपनी लाडली का हाथ में थामे दिनभर आंखें मूंद शैया पर पड़ी रहती थी।

"मालती, मेरी बच्ची सुखी रह। वड़े की पत्नी बन तू ऊंचा दर्जा हासिल करेगी। मोटर में फिरेगी। तेरी भाग्यरेखा बलवान जो है। लेकिन हमेशा एक बात ध्यान में रखना। उसके प्रति जीवन में कभी दुर्लक्ष न करना। वह यह कि दुखियों को भूलकर भी तकलीफ न देना। मिथ्याभिमान न रखना। ज्यादा अकड़ अच्छी नहीं। प्रत्येक से मीठा बोलना और कुल परंपरा से आये रीति-रिवाजों को वड़ों में जा खंडन-मंडन न करना। देव-धर्म और देश को स्वप्न में भी कभी न भूलना। समझी ना?" माता समझा-बुझा रही थी। जयन्त-पारवी को अपने निकट बुला और प्रत्येक का चुम्बन ले सिर-पर हाथ फेर चिरंतन प्रेम से वहू के सिरपर हाथ रख आशीर्वाद दिया।

उस दिन की रात्रि में, जहां सारी दुनिया सुख के खर्राटे ले रही थी, वहां सखाराम, बड़े भैया, मालती, भाभी वृद्धा की शय्या को घेरे बैठे थे। सब के चेहरे पर उदासी की घटा छायी हुई थी। जब जब मां जरा हिलती डुलती—तब तब सब के नैन आशा से चमक उठते लेकिन क्षणभर के पश्चात् वहां भयंकर शांति घर में सर्वत्र छा जाती। जयन्त और पारवी, दुनिया के साथ सुख की निद्रा ले रहे थे। वे क्या समझे? अबोध जो ठहरे। वृद्धा ने जरा आंखें खोलीं, प्रत्येक की ओर क्रम से देखा। दोनो कृश हाथ धीरे-धीरे उठाये आशिर्वाद देने के लिये। क्षणभर वही स्थिति रही। पलक गिरते गिरते मुंह फेर लिया। इहलोक की यात्रा समाप्त कर अपने पति से मिलने

स्वर्गलोक की ओर वृद्धा ने प्रयाण किया। सब आश्चर्यचकित हो निष्प्राण देह को देखते ही रहे और दूसरे ही क्षण आँखों से आँसू उमड़-उमड़कर बहने लगे मालती फूट-फूटकर रोने लगी।

कुछ दिनों के पश्चात् जब शोक-बदली फटने लगी तो एक दिन भाभी अपने दोनो बच्चों को ले मैके चली गयी ताकि सास के दुःख को भूल ठीक तरह से अपने गृह संसार में पुनः लग जावे। घर में सिर्फ तीनो भाई-बहन ही रह गये थे। घर का सारा काम-काज मालती ही करती थी, सखाराम भी कभी-कभी गृहकार्य में उसे मदद देता।

“सखाराम, तू वकालत का तो अभ्यास कर। किसी न किसी कार्य में अपने को लगाये रख वर्ना पुनः जीवन से उब घर छोड़ कहीं चला जायगा। कमाना सीख। तेरी भी मदद होने दे। संसार-गाड़ी को प्रगति-पथ पर ले जाने के लिये।” दादा ने कहा एक दिन।

“दादा, मैं भी यही सोच रहा हूं। हायकोर्ट प्लीडर की परिक्षा में सम्मिलित होने का। लेकिन मैं एक धेला उपार्जन नही करता और आप पर ही सब का बोझ...!

“मैं तो अपनी शक्ति के अनुसार तुम सबका बोझ ढोता ही हूं और यथाशक्ति जीवन में आगे भी ढोता ही रहूंगा। लेकिन तू ज़रा अपने भविष्य के जीवन की दृष्टि से व भलाई-बुराई का विचार कर।”

“हां भैया।”

सखाराम वकालत के अभ्यास में मन लगाकर जुट पड़ा मालती घर में सिलाई का कार्य करने लगी थी उसे अभी-अभ बड़े भैया (दादा) ने सीने की मशीन ला दी थी। वह भ

अपनी शक्ति के अनुसार घर–खर्च में योग देने लगी। भैया के कंधे पर का भार जरा कम हुआ उससे।

अचानक घना का पत्र सखाराम को प्राप्त हुआ है। वह बहुत देर तक उसका पत्र पढ़ता रहा। और आखिरकार गंभीर चेहरा बना पत्र जमीं पर रख चुपचाप बैठ गया। उसके चेहरे से व्यग्रता टपक रही।

"भैया, किसका पत्र है?" मालती ने यों ही पूछा।

"उसी मेरे मित्र का?"

"घनाका, ठीक है ना?"

"हां, उसने भी मेरे पीछे पीछे संस्था को तिलांजल दे, वहीं गांव में एक घर ले रहना शुरू किया। वहां पर उसने रात दिन श्रम कर धनवानों के भंडार भरने वाले श्रमिक मजदूरों का संगठन प्रारंभ किया है। वह नित्य प्रति रात्रिमें उनके वर्ग लेकर जग की प्रगति से उन्हे परिचित करता है, उन्हें अपने प्रश्न समझाता है और उनकी तकलीफों को स्वयं समझने की कोशिश करता है। प्रति रविवार को विद्यार्थियों के भी खास तौरपर वर्ग लेता है। उन्हे अपने साथ ले गांम की गन्दगी मिटाने के हेतु स्वच्छता आंदोलन चलाता है। पाखाने भी उसने स्वयं स्वच्छ किये। गांव की गली गली स्वच्छता में नहा रही है। मैं घर आकर निष्क्रिय बन गया और घना सक्रिय बन सेवा में रम गया। मालती, यह सब इस पत्र में लिखा है और भी बहुत कुछ।"

"और क्या लिखा है उसने?"

"वह बीमार हो गया है। मुझे अपने निकट बुलाया जाऊं क्या मैं?"

"उसे ही अपने यहां क्यों नहीं ले आते? यहां उसकी तवीयत लग जायगी। घर का आहार प्राप्त होगा। और तुम भी वहां जाकर क्या करोगे? क्या घर जैसी व्यवस्था वहां करती वनेगी?"

"तो उसे मैं लिख देता हूं कि तेरी यहां हवा फेरके लिये आने की शक्ति हो तो, चले आओ शीघ्र ही। अगर नहीं है। तो सूचित करो मैं स्वयं तुम्हें लेने आता हूं।"

"लिख दो; ठीक ऐसा ही लिखा दो।"

सखाराम ने ठीक उसी तरह के मज़मून वाला पत्र लिखा। प्रत्युत्तर में घनाने लिखा था, "मेरी तवीयत अव ज़रा ठीक है। मैं आ रहा हूं।" उसे लेने के लिये मालती व सखाराम दोनो स्टेशन गये थे, वहां उनकी पूरे उंचे, दुवले-पतले घना से मुलाकात हुई लंवे अर्से से मिले दोनो मित्रों ने परस्पर एक दूसरे का हाथ, हाथ में लिया।

"कितना दुवला हो गया रे तू।" सखाराम ने कहा।

"अव मुझे भारी भरकम होने की टॉनिक देकर ही फिर से भेजना।"

"यह मेरी वहन मालती। इस के बारे में मैं तेरे साथ कई मर्तवा वोला था। पिताजी की लाडली थी यह और म कीं भी। माँ की मृत्यु से उसे वहुत सदमा पहुंचा है हमेश उदास वनी रहती है। मानो दुनिया इसके लिये है ही नही आज ज़रा इस के हृदय की कली विकसित हो उठी है।"

"और चिर काल तक ऐसे ही विकसित रहे – व मुरझाने का नाम न ले।" घना ने मालती की ओर निह हुए कहा। तीनो चुपचाप एक-दूसरे से विना वोले घर अ

घना थकावट महसूस कर रहा था।

"स्नानादि करने से ज़रा ठीक लगेगा।" सखाराम ने कहा।

"भैया, गरम पानी चूल्हे पर तैयार है।" मालती शीघ्र ही बोल उठी।

घना ने स्नानादि कार्य से निवृत्त हो भोजन किया और आराम लेने के हेतु पास ही के कमरे में सो गया। पिछले कितने दिनों के पश्चात् आज वह गहरी नींद सोया था। तीसरे प्रहर में जब वह जगा तब उसके चेहरे पर प्रसन्नता खेल रही थी। थकावट तो मानो उस से डर कर कभी की कोसों दूर भाग गयी।

"घना चाय लोगे ना?" सखाराम ने पूछा।

"लूंगा।"

मालती चाय की ट्रे ले आयी। तीनों ने एक साथ चाय पी और बाद में घना पढ़ने के लिये बैठ गया एक ओर एकांत-मय जगह देख।

"क्या पढ़ रहे हैं?" मालती ने पूछा।

"मजदूर आंदोलन का इतिहास पढ़ रहा था।"

"आपको यह सब अच्छा लगता है क्या?"

"इस कार्य में हाथ अवश्य डाला है लेकिन मेरे मन में नित नयी आकांक्षाएं और उमंगें जन्म लेती हैं। कोई ख़ास काम कर दिखाने की मन ही मन में तीव्र लालसा होती है।"

"ख़ास काम यानी क्या?"

"समझ लो कल हड़ताल हो गई तो यह क्या करेंगे? एकाध मर्तबा हमें छोटे हट भी करनी पड़ती है। तब सैंकड़ों की तादाद में मजदूर बेकार हो जाते हैं तब इलाज क्या? कहीं

न कहीं बंजर जमीन तो होती ही है। वहां सैकड़ों की तादाद में मजदूर वर्ग के साथ जाओ और सामुदायिक जीवन बसर करने का एक प्रयोग करें। एक नूतन सहकारी पद्धति पर निर्मित मानवीय संस्कृति विकसित करने की कल्पना मन में आती है। मैं यद्यपि सुन्दरपुर में कार्य करता हूं लेकिन हमेशा इसी विचार में रह कर सफल नव-प्रयोग के सपने देखा करता हूं।"

"वहां हड़ताल क्या होगी भला ?"

"आज नहीं तो कल समय आयेगा ही। बहुत कम मजूरी दी जाती है वहां मजदूरों को उनके रहने की कोई व्यवस्था नहीं। सुन्दरपुर स्थित उस संस्था में, आज तक कम-से-कम ७५ हज़ार रुपये बेकार-दीन-मजदूरों की तनख्वाह में से गये होंगे। यह सारी की सारी रकम उन्हें फिर से क्यों न मिलनी चाहिये ? उस में से उनके लिये नयी इमारतें बांधी जायंगी, जिसमें वे अपनी गृहस्थी व बाल-बच्चों के साथ रह सकेंगे। मैं ये सब प्रश्न लेकर मालिक के समक्ष जाने वाला हूं। लेकिन वहां जाने के पूर्व सब मजदूरों, श्रमिकों का एक मजबूत अटूट संगठन होना अत्यन्त आवश्यक है। संगठन के बल पर ही सब कुछ हो सकेगा और ऐसा मजबूत संगठन निर्माण करने की कोशिश मैं आज कल सुन्दरपुर के मजदूरों में रह कर करता रहता हूं।"

"मुझ से काम होगा क्या वहां ?

"हां अवश्य ही होगा क्यों न होगा ? आप नारी-वर्ग में जाती रहें। उन के वर्ग चलायें। मजदूरों बच्चों को सम्हाल लें उनके कपड़े सीकर दें। काम की कमी ही कहां है ? लेकिन

आप यहां कैसे आयेंगी ? सखाराम यहां आता तो आप भी उन के साथ आ सकती थी।"

"भैया हम जायें क्या सुन्दरपुर ?"

"फिलहाल नहीं। अब कहीं ठीक तरह से अभ्यास प्रारंभ किया है। आज तक प्रयोग करने में, घूमने और शहर शहर तथा गांव-गांव भटकने में सारा आयुष्य बिता दिया। एक तो काम इस हाथ से पूरा होने दे। मां ने कहा था कि बड़े भैया को सहायता देना। आज तक घर-गृहस्थी का सारा बोझ बिना कुछ कहे दादा ने अपने कंधों पर उठाया है। मेरे हाथ से ना हुई देश-सेवा और ना ही कुटुम्ब-सेवा।"

"हिंदुस्तान के प्रत्येक कोने की खाक छान तुमने अनुभव रूपी धन एकत्रित किया है।" धना ने कहा,

"परन्तु वह इस संसार में किस उपयोग में आयेगा ?" सखाराम ने प्रत्युत्तर दिया।

"भैया, ये हैं बीमार ना ? व्यर्थ की चर्चा अच्छी नहीं।" मालती ने कहा।

"मुझे अब अच्छा लगता है।" धना ने कहा।

"हम सब घूमने चलें क्या ?" मालती ने सखाराम से पूछा।

"उससे पूछ।" सखाराम ने धनाकी तरफ इंगित करते हुए कहा।

"आप आ सकेंगे क्या ?" उसने पूछा।

"आऊंगा। तुम भाई बहन की अजरामर वात्सल्य-सिक्त जोड़ी की संगति में मुझे भी आनंद प्राप्त होगा।" धना ने कहा।

संध्या का समय, जब भगवान भास्कर अस्ताचल की ओर जाने की तैयारी कर रहे थे, ये तीनों घूमने के लिये घर से बाहर

निकले। गांव के वाहर जरा दूर स्थित एक सरोवर श्वेत स्फटिक से जल में ज़रा दूर कमल थे जो शाम होने की वजह से भगवान भास्कर के वियोग में अपने को अवगुंठित कर रहे थे। सरोवर–जल के साथ वृद्ध रश्मियाँ निरुत्साहित हो निष्फल क्रीड़ा कर रही थी।

"क्या हम ठिकरी चलाने का खेल खेलें?" मालती ने कहा।

"हम क्या छोटे हैं जो अब भी यह खेल खेलें।" सखाराम ने कहा।

"खेल कभी भी खेलने में कोई वाधा नहीं। खेल जैसी निष्पाप कौनसी वस्तु है इस जग में। मैं खेलूंगा।" इतना कह घना ने छोटे छीटे पत्थर इकट्ठे किये और एक छोटासा पत्थर उसमें से उठा उसने पानी पर टेढ़ा फेका। पत्थर फुदकता हुआ चला गया उस पार।

"आपके पत्थर में मानो पंख लग गये थे। आपके हाथ में अजब शक्ति है। अब मैं फेकूंगी पत्थर देखिये।" मालती ने पत्थर फंका, लेकिन वह फुदकने के वजाय पानी डूब में गया अब सखाराम से भी रहा न गया। वह भी खेलने में शामि हो गया। तीनो खेल खेलने में मग्न हो गये। घना के पत्थ नाम मात्र पानी को। शंर्र करते फुदकतेचले जाते। मालती मन ही मन सराहना की।

"राम नाम की शक्ति से बड़ी बड़ी शिलाएं भी तैर ग आप भी मन में क्या राम नाम जपते हैं?" उस ने पूछा।

"जनसाधारण की सेवा ही मेरा राम नाम है। मेरे

मंत्र-तंत्र से लिये कोई स्थान नहीं।"

"आप देव-देवी में विश्वास नहीं रखते, तो क्या नास्तिक हैं आप?"

पुनः पूछा उसने।

"नास्तिक का अर्थ ही क्या? यह सारी दुनिया मांगल्य की ओर तेजी से कूच कर रही है, यह आशा जिसके पास है, यह आशा जिसके पास है वह आस्तिक नहीं क्या? देव, व्योम के किसी भी कोने में स्थित है—ऐसा मान इस दुनिया में प्रत्यक्ष वर्ताव में वह मनचाहा वर्ताव करता है उसके वनस्थित विश्व के मांगल्य के प्रति श्रद्धा रख मांगल्य के मानव जीवन में समरस हो जाये इसके लिये रात दिन अविश्राम मेहनत करता है वही सच्चा आस्तिक है, ऐसा आप नहीं कहेंगी? सखाराम तुम्हें क्या लगता है?"

"ईश्वर के प्रति रत्ती मात्र भी श्रद्धा-भक्ति न रखनेवाले नास्तिक कई दफा महान संतों की तरह जिन्दगी बिताने नजर आते हैं—तो दिन भर हाथों में माला लिये फिरनेवाले दांभिक भी साधु-चरित्र मानवों को धर्म की आड़ में लूटते-खसोटते प्रत्येक जगह यदाकदा दृष्टिगोचर होते हैं।" उसने कहा।

मालती टकटकी लगा संध्याकालीन रंग-बिरंगे सप्तरंगों से आच्छादित व्योम में शतरंग का बाजार लगा हुआ था। ठीक उसी तरह उसके मुंहपर भी रंगों का बाजार लगा हुआ। था। उसने यकायक मौन व्रत धारण कर लिया। और जरा दूर की चट्टान पर बैठ गयी। सखाराम और घना ने भी उसी चट्टान पर बैठक ली। सृष्टि को क्षणभर में रंग बदलती निहार तीनों ऐसे निस्तब्ध बन गये मानों समाधिस्त हों।

“भैया, चलो। देर हो गयी, मुझे रसोई बनानी है। भाभी अगर आज यहां होती तो उनके हाथ की स्वादिष्ट रसोई खाते।” मालती ने कहा।

“घना, हमारी भाभी सामान्य नारी नहीं बल्कि देवी है। आजतक कभी भी दो मुंह होनें की बारी नहीं आई घर में। द्वेष – मत्सर तो उससे कोसों दूर भागते हैं। ईर्ष्या का नामोनिशान नहीं उसके स्वभाव में। मालती जब कभी गृह कार्य में उसका हाथ बंटाती है तब वह प्रेम भरे शब्दों में प्रायः डांटा करती है, “बहन तुम क्यों काम करती हो? कल ससुराल जानेपर काम ही काम मिलेगा तुम्हें करनें के लिये।” सचमुच हमारे दादा और भाभी की जोड़ी तो राम–सीता सी पवित्र और प्रेममयी है।” सखाराम ने भाभी व भैया के प्रति प्रशंसोद्गार निकालते हुए कहा।

“आप कभी ससुराल भी जायेंगी?” घना ने अचानक प्रश्न किया मालती से। “शादी के बिना कैसे और कहां जाऊं।” तत्क्षण हँसते हुए मालती ने जवाब दिया। “मेरे ध्यान में तो कुछ ही न रहा। मुझे तो लगा कि आप की शादी कभी की हो गई होगी। चन्द रोज पहले कोई बॅरिस्टर साहब पधारे थे ना?” घना नें कहा।

“वह बॅरिस्टर न था बल्कि बालिशतर था पागल कहीं का, मेरे मन में तो उस से घृणा ही उत्पन्न हो गई।” सखाराम ने जवाब दिया।

घूमकर वापस लौटते समय, राह में घना के जोर की ठोकर लगी। अंगूठे में से खून जोर से बहने लगा।

“कितनी बड़ी चोट आई है।” मालती ने पूछा।

"मेरा उस तरफ ध्यान ही न था।" दादा ने कहा।

"सम्हाल कर चलना पड़ता है इस दुनिया में।" सखाराम बोल उठा।

चुपचाप सारी राह में बिना बोले दोनों घर आये। दादा कभी के आगये थे नौकरी पर से। मालती आते ही रसोई करने में जुट पड़ी। बाहर की बाल्कनी में आरामकुर्सी डाल सखा राह की थकावट दूर उतारने लगा। थोड़ी देर बाद अपने आप उसकी आंख लग गयी और इधर दोनों भाई परस्पर मालती की शादी के विषय में बातचीत कर रहे थे।

"ये तेरे मित्र शादी के लिये राजी न होंगे?" दादा ने पूछा।

"दादा, अचानक यह प्रश्न आपके मन में कैसे उपस्थित हुआ?"

"उन्हें निहार मेरा मन-मयूर आनंदित हो नृत्य करने लगा। मुझे इस में पतितपावन के साक्षात दर्शन हुए। उनके स्वभाव में पवित्रता की झलक दिखाई दी। ऐसा लगा मानो तेरे मित्र सा पति मालती को प्राप्त हुआ तो उस में सुप्तावस्था स्वरुप में पड़े अनेक विघ्न गुणों को विकसित होने का यथोचित मौका प्राप्त होगा।"

"मैं उस से भी पूछूं तो कैसे? वह सुन्दरपुर रह दीन-दरिद्रों की सेवा में रात दिन रत रहता है। वहां के असहाय-निर्बल मजदूरों के लिये वर्ग चलाता है; लोगों को ज्ञान की तरफ आकर्षित करने के माया-जाल में फंसाऊं? और संसार चलाने के लिये क्या नहीं चाहिये? उस के पास है भी क्या? ना खाने का पता ना पीने का। सुन्दरपुर के चन्द मित्र-परिवार

स्पर चन्दा करके इसका खर्च चलाते हैं।" सखाराम ने
ना के बारे में सविस्तर जानकारी दादा को देते हुए कहा।

"मेरे मन में जो बात आई सो तुझे बता दी।"

"क्या आया, आप के मन में दादा?" मालती ने रसोई-
घर से बाहर झांकते हुए पूछा।

"तेरी शादी के अलावा मन में होगा भी क्या? उसके
सिवा मां की मृतात्मा को संतोष न होगा।" दादा ने दुःखित
स्वर में कहा।

"दादा मैं आज आपसे स्पष्ट कह देती हूं कि मेरी शादी
का विचार ही जड़ मूल से मन में से निकाल दीजिये।"

"क्यों री तू ने किसी को पसंद कर लिया है क्या? यों
शर्मिन्दा न बनो।"

"दादा, मैं अपने घर का दालान छोड़ कहीं जाती भी हूं
क्या? फिर किसे और कैसे पसंद करूं? मेरी तीव्र लालसा तो
दरिद्र-नारायण की तन-मन से सेवा करने की है। आज या
कल आपकी मालती जन साधारण के सेवार्थ घर से बाहर
जायेगी जहां उसको कर्तव्य पुकार रहा है।"

"मालती मुझे तेरा ज़रा भी बोझ नहीं लगता। तू व्यर्थ
में ही चिंतित मत हो तेरी शादी के लिये हम कुछ भी प्रयत्न
नही करते ऐसा तुझे प्रतीत होता है क्या?"

"तेरे मुंह में ऐसी उद्वेग की भाषा क्यों?" दादा ने दुःखित
हो उससे कहा।

"खैर, अब भोजन करने चलो पहले।" उसने कहा।

"घना, ओ घना।" सखाराम ने आवाज़ दी। वह आंखें
मलते हुए आराम कुर्सी से उठ खड़ा हुआ। और "मैं कितने

सुन्दर स्वप्न में विहार कर रहा था। क्यों जगाया मुझे अपने कल्पित स्वप्न देश से वापिस बुला कर ?" उसने कहा।

"प्रथम पेट पूजा कर लो फिर खूब देखना स्वप्न। समझे।" सखाराम के शब्दों से प्रेम-रस टपक रहा था। सब के भोजन हो गये और सचमुच घना शीघ्र ही निदिया रानी की गोद में सो गया। वह आज बुरी तरह से थक गया था। घूमते-घामते और खेलते हुए।

आठ दिन कैसे बीते किसी को पता न लगा। आज घना वापस अपने गांव सुन्दरपूर कार्यक्षेत्र की ओर प्रयाण करने वाला था। आज खास तौर पर खीर पूरी का आयोजन था।

"पेट भर भोजन कीजिये।" मालती ने कहा,

"आज खीर पूरी की योजना किस लिये?" उसने पूछा।

"यह शादी के उपलक्ष में।" दादा ने शांति से प्रयुत्तर दिया।

"तो क्या शादी कहीं ठीक हो गयी ?"

"दादा को मालूम" सखाराम ने कहा।

घना का सारा सामान व्यवस्थित - रूप में बांधा गया बाहर कोई वस्तु न रही। जाने की तैयारी ही थी स्टेशन की ओर इतने में मालती एक डिब्बा ले आयी। "यह अपने साथ ले जाइये" उस ने कहा।

"व्यर्थ में ही बोझ क्यों ?"

"रास्ते में काम करियेगा। और वहां भी तो आप अकेले हैं। कौन है, जो देगा पकवान बना कर खाने के लिये ? आप सारे विश्व की फिक्र करते हैं, लेकिन आप की कौन करेगा? हम तो हैं साधारण लोग थोड़ीसी सेवा आप जैसों की हम से हो

गई तो इस से बड़ा और कौन सा सौभाग्य हमारा हो सकता है भला ? सचमुच !" वह कंपित स्वर में बोल रही थी।

"मालती, आप सब चिर काल तक सुखी रहें।" उसने कहा और सबसे विदा ले स्टेशन को गया। रेल में बैठने के पश्चात् उसके पिछले आठ दिन से रुके विचार-चक्र ने पूरे ज़ोर से घूमना प्रारंभ कर दिया।

घनश्याम का कार्य

तो स्वच्छता सप्ताह में योग दोगे न? हम नित्य ही ६ से लगाकर ८ बजे तक जायेंगे स्वच्छतार्थ हर कहीं। तुम्हारे अभ्यास में खलल न पड़ेगी यह निश्चित समझो। हम सितम्बर २६ दिनांक से स्वच्छता यज्ञ प्रारंभ कर गांधी-जयन्ति २ अक्तूबर तक इसे जारी रखेंगे। गांधी जयन्ति निमित्त योजित गांधी सप्ताह को इस मर्तबा हम स्वच्छता-सप्ताह में परिवर्तन कर खूब ठाठ-बाट से मनायेंगे। समझे आओगे ना फिर? घनाने, उसके वर्ग में आये, गांव के विद्यार्थियों से पूछा। वह प्रति रविवार इन विद्यार्थियों दो घंटे पढ़ाया करता था। कभी संस्कृत तो कभी अंग्रेज़ी कभी गणित तो कभी मराठी। इसी भांति क्रमशः वह सब विषय पढ़ाता था। पढ़ाने का उस का उद्देश्य भी अस्पष्ट न था। वह विद्यार्थियों से संबंध बने रहें और अपना ज्ञान-नीर भी अबाधित रूप से बहता रहे, इस हेतु दो घंटे उन्हें पढ़ाता था। कभी कभी वह अंग्रेज़ी अख़-बारों में प्रकाशित सुन्दर व शैक्षणिक लेख पढ़ कर सुनाया करता। इस तरह राजनीति-विषयक ज्ञान भी उन्हें प्रायः देता रहता। उसका रविवार का वर्ग यानो एक प्रकार का सहभोज था।

पिछले कितने दिनों से उसको स्वच्छता सप्ताह मानने की मनीषा थी। इसी बहाने सारा गांव साफ़ होगा। गंदगी का

नामोनिशान मिट जायगा यहां से - यही स्वच्छता-सप्ताह मनाने के पीछे पर्श्वभूमि थी घना की । स्वच्छता विषय पर उसने अनेक गीतों की रचना भी की थी। लेकिन अभी तक कोई मौक़ा ही न आया था। इस मर्तबा अवश्य मनाना - ऐसी उस की अपनी निश्चित योजना थी। वह विद्यार्थियों के प्रत्युत्तर का बेचैनी से इंतज़ार कर रहा था।

"हम आयेंगे और अवश्य आयेंगें । आपका साथ होने पर हम भला क्यों न आयें। अवश्य योग देंगे स्वच्छता-सप्ताह मनाने में।" उनसे एक विद्यार्थी नें प्रत्युत्तर दिया।

"मैं भी आऊंगी।" एक विद्यार्थिनी ने धीरे से कहा।

"तुम विद्यार्थिनियो को तो ऐसे कार्यों में सबसे पहले योग देना चाहिये। स्वच्छता निर्माण करना या रखना नारी का जन्म-सिद्ध हक़ है। नर का कार्य ही गंदगी फैलाना और नारी का दूर करना। नरकासुर को सत्यभामा ने ही मारा था मालूम है ना ?"

"हम कहां एकत्रित हों ?"

मेरे कमरे पर ही एकत्रित होना बेहतर होगा। वहीं से हम स्वच्छतोपयोगी सर-सामान के साथ सज्ज हो कूच करेंगे अपने कार्यक्षेत्र की ओर।

"सब साथ ही चाहिये ना ?"

सब तय हुआ। दिनांक २६ की सुबह, घना द्वारा संचालित ग्रामोद्धार-कार्यक्रम की ओर शहरियों को आकृष्ट करने की प्रथम सोपान थी। ठीक समय पर विद्यार्थी व विद्यार्थिनियां घना के कमरे पर एकत्रित होने लगीं। निश्चित मुहुर्त पर स्वच्छता-टुकड़ी ने कूच प्रारंभ की। सारे शहर को सात रण

क्षेत्र में विभाजित कर दिया था। क्रमशः प्रत्येक रणक्षेत्र पर प्रतिदिन चढ़ाई करने की घना की योजना थी। आज बाहेरपुरा क्षेत्र उनकी कूच का लक्ष था। घना ने अपने हाथ में पतरे के टुकड़े ले रखे थे। जहां कहीं विष्टा दृष्टिगोचर होती उस पर मिट्टी डाल सफ़ाई कर दी जाती। घना की विद्या साथी विद्यार्थिनियों ने भी आत्मसात कर ली थी। सब जगह सफ़ाई के दर्शन होने लगे। गन्दगी निहारते ही विद्यार्थियों में स्फूर्ति उत्पन्न होती और "अरे, यह देखो गन्दगी यहां देखो" कोलाहल से सारा मोहल्ला गूज उठता। टुकड़ी के सैनिक शीघ्र ही सेनापति के आदेश की राह तके उस पर टूट पड़ते और तभी दम लेते जब उनका शत्रु साफ हो जाता। उसका नामोनिशान तक मिट जाता वहां से। उन्हें लगता मानो वे सचमुच अपने शत्रु पर आक्रमण कर रहें हों। और यही हमारे जीवन-समृद्धि पथ के बड़े रोड़े नहीं क्या? अज्ञान, अस्वच्छता (गन्दगी) आलस्य, रुढी, नाना भेद यही तो वास्तविक रूप से देखा जाय तो हमारे शत्रु हैं। इन्हें जड़ मूल से उखाड़े बिना स्वराज्य कहां? इन्हें दूर किये बिना स्वराज्य आ भी गया तो वह दीर्घ काल तक टिकेगा नहीं।

उपरोक्त प्रकार के उत्साह-वर्धक गीत गाते हुए टुकड़ी अपने कार्य में क़दम क़दम पर प्रगति कर रही थी। गन्दे मोहोल्लों में झाड़ू मारते, टोकरी में कचरा भरते वे अपने आप को भूल गये थे इस महद् कार्य में। सेवा यही सबसे बड़ा आनंद है जग का, जिस को इसकी लगन लग गयी, वह आजन्म सेवा व्रत धारण किये अविरत रूप से जनता-जनार्दन की सेवा करता रहेगा।

वस अव । आज का हमारा कार्यक्रम पूर्ण हुआ । नदी किनारे स्नान करने चलोगे न ? वड़ा ही मज़ा आयेगा ।" घना ने साथियों से पूछा ।"

" हां हां नदी किनारे ही जाएं ?" एक ने कहा ।

" लेकिन वस्त्र तो साथ में है नही किसी के ?" दूसरों न झट शंका उठायी ।

" नदी पर जा हाथ-पैर धो चले आयेंगे और हमारी स्वच्छता औज़ार भी तो साफ़ करनी है अभी ।" घना ने सूचित किया ।

" स्वच्छतोपासक समूह नदी किनारे गया । वहां पतित पावत सरितादेवी शांतमूर्ति सी मन्द गति से वह रही थी। सारी दुनिया की गंदगी को विना किसी वैर विरोध के अपने अथाह प्रवाह में निरंतर वहा के जाने वाली यह लोक माता समूह को लख, मानों हर्ष विव्हल हो उठी हो या लहरों रूपी मुस्कान को ओठों पर ला कलकल नाद करती स्वागत गीत गा रही हो ।

अदम्योत्साह में पहला दिन समाप्त हुआ इसी तरह और दिन भी व्यतीत होने लगे ।

" आप हमेशा हमें नया विभाग दिखाते हैं शहर का । आज तक कालुपुरा नामक कोई चीज़ भी शहर में हैं यह मैं न जानता था ।" एक विद्यार्थी ने विस्मित हो कहा ।

" मैं तुम्हें सव को सुन्दरपूर का भूगोल सिखा रहा हूं । इस शहर में कौन कहां है, दीन दरिद्रों के आवास कहां उनकी वस्ती कैसी होती है, उनके उद्योग धंदे क्या ? आदि सव धीरे धीरे अपनें आप ज्ञात होगा। जिस शहर में हम वर्षों से निवास

करते हैं उसकी जानकारी भी हमें कहां होती है? ठीक है ना?" घना ने कहा।

कालुपुरा के तो भाग्य ही खुल गये। उस दिन वह आइने सा स्वच्छ होगया। किसी जगह एक चाल थी जिसके मालिक महाशय ने पाखाने की ओर कभी एक बार भी निहारा हो तो खुदा की कसम।

छोटे छोटे कीड़े तड़प रहे थे। सिर फटे ऐसी बुरी दुर्गन्ध आ रही थी। यहां रह कर लोग कैसे बैठते होंगे? इतनी गन्दगी में वे कैसे जीवित रह सकते हैं? जो गन्दगी में जी सकता है, रह सकता है क्या वह मानव है?

घना और उनकी टुकड़ी ने बिना जरा भी अनाकानी किये सारी गन्दगी को केंद्र बिंदु समझ, उस पाखाने को अच्छी तरह साफ किया। उसके चारों तरफ फिनेल डाला। चाल के मालिक को सूचित करने पर वह अश्वरथ पर सवार हो वहां आया। लेकिन वहां नज़ारा लख वह स्वयं शर्मिन्दा हो गया और उसने कहा, "घनाभाई, रहने भी दो। आप क्यों करते हैं ऐसा काम?"

"हमने यह काम अपना खुद का मिथ्या अहंकार दूर करने के हेतु किया है। हरिजन बन्धुओं के साथ अपने संबंध घनिष्ट बनाने और वे तथा हम दो नहीं एक हैं—यह जनता के हेतु यह सब करते हैं। हमारा उद्देश आपको शर्मिन्दा करना कदापि नहीं। यह विद्यार्थी समुदाय हमेशा महात्मा गांधीका जयघोष करता है। लेकिन पूज्य बापूजी नित्य ही कहा करते हैं। कि 'मेरे नाम का जयघोष क्यों?' मेरी शिक्षा, मेरी पद्धति, मेरी प्रणाली, मेरे कार्यक्रम का जयघोष

गांधी जयंति मत कहो, उसे चर्खा जयन्तिरोटिया वारस कहो। हमें अत्यंत प्रसन्नता हुई आपकी चालवाले पाखानें में भरपूर काम मिला इसलिये," घनानें शांतिसे कहा।

तत्क्षण ही विद्यार्थी समुदाय नें 'महात्मा गांधी की जय' गगन भेदी घोषणा की।

एक दिन की बात है -- स्वच्छता कार्य चल रहा था किसी मोहल्ले में। घना गन्दगी साफ कर एक टोकरी में भर रहा था कि अकस्मात ऊपर से किसीने गन्दा पानी उंडेल दिया। घना एडी से चोटी तक नहा लिया गन्दे पानी में। और पानी भी था झूठा, काला--कलूटा और न जानें किन किन पदार्थों का मिश्रण।

"मैं कैसा सोह रहा हूं दुल्हे के रूप में।"

"लेकिन दुल्हन है कहां?" किसी विद्यार्थिनी ने पूछा।

स्वच्छता यही मेरी दुल्हन। जन्म--जन्म मुझे ऐसी दुल्हन प्राप्त हो। बजाओ तालियां, साथियो रचाओ शादी। स्वच्छता देवी के जय-जयजयकार से सारा व्योम गूंजनें दो।

सेवा का वह प्रात्यक्षिक था। सेवकों को निराहंकारी बन कार्य करना पड़ता है सर्वत्र। वह किसपर कुपित होगा? किससे रूठेगा? अपने ही ओंठ अपनें ही दाँत सजा दे तो भी किसे?

"तुका कहते एक ही देह के अवयव हम सब।"

आज स्वच्छता सप्ताह का अन्तिम दिन था। आज क मोर्चा मजदूर वस्ती की ओर था। वहां के स्वच्छता संग्राम मे मजदूरों नें भी जी भर के साथ दिया। अन्त में घना ने एकत्रि मजदूर--मेदिनी को दो शब्द सुनाये स्वच्छता--यज्ञ में आदि

अन्त तक परोक्ष–अपरोक्ष रूप से सहानुभूति दर्शाने वाले और सक्रिय साथ देनेवाले अपने साथ विद्यार्थी विद्यार्थिनियों को धन्यवाद दिये।

"अब कौन सा सप्ताह मनायेंगे ?" विद्यार्थियों ने उत्सुक हो पूछा।

"अल्प अवधि के पश्चात् हम 'साक्षरता सप्ताह मनायेंगे। सबको क्यों सीखना चाहिये – विषयक ३० चित्र मेरे वड़ोदा के मित्र ने चित्रित किये हैं। उसे वह शीघ्र भेजनेवाला है। उनके आजाने पर हम सुबह ही सुबह में लगातार सप्ताह तक 'साक्षरता गीत' गाते जुलूस निकालेंगे। और प्रदर्शन में आनेवालों को चित्रो का महत्व समझायेंगे।"

"कब मनायेंगे यह सप्ताह ?"

"दिवाली की छुट्टियों में।"

विद्यार्थी समुदाय बेचैनीसे दिवाली की छुट्टियों का इंतजार कर रहे थे। यथा समय वड़ोदा से घना के मित्र ने सब चित्र भेज दिये। नगर – मंदिर की जगह किराये पर लेकर साक्षरता सप्ताह निमित्त बड़ी प्रदर्शनी की योजना तय की। नागेश, रमेश, उज्ज्वल, मुल्लादि बालमित्र अदम्य उत्साह से निश्चित जगह की सजावट में मग्न हो गये। हॉल की दीवारों पर क्रमानुसार चित्र क़रीने से लगाये गये। रंगबिरंगी पताका, वन्दनवार और तिरंगे ध्वजों से हॉल सुशोभित हो गया था। जगह जगह पर ब्रीद वाक्यों की रचना की गई थी।

राष्ट्र के सभी प्रतिभाशाली प्रमुख नेताओं की तस्वीरों नें मंडप की शोभा में और भी वृद्धि कर दी थी। ना–

रंगोली द्वारा चन्द शिक्षणात्मक चित्र चित्रित किये थे। प्रत्येक के मन में कुछ न कुछ कर दिखाने की इच्छा वलवत्तर होती जा रही थी। घना ने गेय ऐसे साक्षरता गीतों और मुंह में वैठ जायें ऐसे सरल विचारात्मक घोष वाक्यों की रचना की थी। 'सीखो वन्धुओं, सीखो औरों की स्पर्धा में सीखो' आदि कित्येक ग्रीद वाक्यों की रचना की थी। साक्षरता का महत्त्व साधारण जनता को समझाने हेतु वड़े वड़े फलकों का प्रयोग जुलूस में किया जाता था। नित्यप्रति उषादेवी के आगमन के साथ ही साथ अज्ञानन्धकार में डूवी जनता में दिलचस्पी निर्माण करने हेतु इन साक्षरता प्रचारकों की टोलियां शहर के निश्चित सड़कों पर कूच करती थी। शहर में चैतन्य निर्माण हुआ। शहरी गण भी घना के कार्य में वहुत बड़ी तादाद में दिलचस्पी लेने लगे।

और हर रोज तीसरे प्रहर में प्रदर्शनो देखने के लिए शहरियों व आसपास के ग्रामिणो को भीड़ उमड़ पड़ती। छोटे भी आते और वड़े भी राव और रंक भी आते। आवाल वृद्धों का भी जमघट होता प्रदर्शनी निरीक्षणार्थ। स्वयंसेवक गण चित्रों द्वारा व्यक्त भावनाओं को अच्छी तरह समझाते। "वह देखो एक वृद्धा।" घना चित्र-दिखा कह रहा था। सव के आगे—"इस चित्र के चार भाग हैं। इस इस तरफ के चित्र में सेठजी हमें वड़े गद्दे का सहारा ले वैठे दृष्टिगोचर ही रहे हैं। नौकर उन्हें हवा कर रहा है, पास ही में फलफूल हैं नाश्ते के लिये। सुख में लोट रहे हैं और इधर देखिये कोने मे. एक कंकाल अस्थिपंजर का मारा गरीव मजदूर वह क्षय ग्रस्त है मक्खियां उसके इर्द गिर्द भनभना रही

हैं। घर में अन्धकार का साम्राज्य है और गीलापन उसके घरकी अनोखी शोभा है। न तो पेट भरने के लिए मुट्ठीभर दाने, पीने के लिए चुल्लूभर पानी है और प्रकाश तो उससे सर्वथा रुठ ही गया है और नीचे देखिये तीसरे चित्र में। उसे एक ज्योतिष महाशय कह रहे हैं कि तुझ पर शनी की कुदृष्टि है। योग्य दान धर्म करो, प्रति शनिवार को उपवास करो लेकिन हाय बेचारा। दान-धर्म करेगा तो कहां से? उपवास इच्छा से न सही अनिच्छासे भी करता है वह। अब देखिये चौथे कोने में सेवादल के सैनिक को, जो कह रहा है कि शनि-मंगल की पीड़ा–वीड़ा कुछ नहीं होती। व्योम में निशी दिन विचरण करने वाले ग्रह क्यों आये दीन दरिद्रों को व्यर्थ ही में सताने? गर सेठजी अधिक मजूरी देते, रहने के लिए अच्छी चाल बन्धवाते, बीमारी में सवेतन छुट्टी देते, तो क्या यह मजदूर बीमार होता? व्योमस्थित शनिग्रह सताता है। अथवा पृथ्वी पर कहर ढानेवाला यह धनिक शनि? कौनसा शनि?"

वह वृद्धा कभी से घना को सुन रही थी। उसके सूखे व झुर्रियों से युक्त चेहरे पर क्षणभर के लिये प्रकाश की आभा छा गयी। सेठजी की तस्वीर की तरफ इंगित करते वह झट बोल उठी–"यही शनि है। यही शनि है।"

लेकिन ये शनि महाशय भी किस तरह अशिक्षितों को फंसाते हैं। यह मह भी जान लेना आवश्यक है हमारे लिये। हमें सिखना चाहिये लिखना पढ़ना आना चाहिये वृद्धओं को सब लूटते है सब फंसाते हैं। ठीक है ना माँजी?"

"मैं भी पढ़ने आऊंगी।" वृद्धाने उत्साहित होकर कहा।

प्रदर्शनी—यशस्वी हुई और खूब हुई। शहर में अदम्य उत्साह से कित्येकों ने सीखना प्रारंभ किया गली-गली व मोहल्ले मोहल्ले में साक्षरता-वर्गों का जन्म हुआ। स्वयंसेवक भी पढ़ाने के लिये बहुत बड़ी तादाद में मिल गये। चन्द शिक्षकों ने भी वर्गों में पढ़ाना स्वीकार किया। किताब स्लेट व पेन्सिल के लिये अर्थ की आवश्यकता थी। सब ने मिलकर अर्थोपार्जनार्थ एक नाटिका अभिनीत करने का निश्चय किया। घना ने एक सुन्दर शिक्षणात्मक नाटक की तैयारी शुरु की। घना भी इस नाटिका में अभिनय करनेवाला था। लेकिन गोपाल व मोती की अभिनय करने की तिथि निश्चय की गयी। टिकट विक्री भी हुई। अपेक्षाकृत ज्यादा तादाद में लोग नाट्च प्रयोग में उपस्थित रहे। और नाट्य प्रयोग भी खासा हुआ। गोपाल के गाये गीत को "वन्समोर" ...प्त हुआ। सबका अभिनय प्रशंसनीय था साक्षरता के लिये ...काफ़ी अर्थ प्राप्ति हुई इस प्रयोग से। मध्यांतर में घनाने सब के आभार माने। प्रेक्षक—वर्ग में अमुक धनराशि अपनी तरफ से सहर्ष भेट दी। गोपाल व मोती को उत्कृष्ट अभिनय तथा गीत के लिये लिये किसी ने पुरस्कृत किया।

"यह पुरस्कार हमें नहीं चाहिये। साक्षरता—प्रचार... समय आनेपर उपयोग होगा इनका भी।" दोनो युवकों... उदार मन से पुरस्कार लेते हुए कहा।

इस तरह धीरे धीरे घना के अधिक परिश्रम के परि... सुन्दरपुर में सेवा ज्योति प्रज्वलित हो रही थी। स्वच्... ज्ञान, सहकार्यादि तेल का सेवा ज्योति को अखंड ... प्रज्वलित करने में पूर्ण उपयोग हो रहा था। ...

विद्यार्थिनियों को साथ लिये जो आनेवाले भारत के आधार स्तंभ हैं; धना अपना सेवा-कार्य अविरत रूप से चला रहा था। यूनियन के सभासद भी अपेक्षा कृत ज्यादा बन गये थे। मजदूरों में धना के ठोस कार्य ने नये प्राण फूंक दिये थे। बीच बीच में वह मजदूरों की सभायें भी करता बाहर के व्याख्याताओं को निमंत्रण दे बुलाता भी। चुने हुए होशियार मजदूरों का वह अलग एक अभ्यास-वर्ग भी चलाता था। उसमें वह समझाता कि अलग अलग देशों में मजदूर आंदोलन कैसे हुए, क्यों हुये। उनके विशेष अध्ययनार्थ उसने एक छोटी-बड़ी लायब्ररी को जन्म दिया था। उसमें बहुत कुछ पुस्तकें भी थीं मजदूर आंदोलन सम्बन्धित। उस दिन रात्रिमें धना व कुछ मजदूर कार्यकर्ता गण आपस में चर्चा कर रहे थे।

"और कितने दिन यों ही व्यर्थ चर्चा करें हम? अभीतक प्रत्यक्ष कदम उठानेकी बेला नहीं, और क्या? यहांवाले मजदूरों की मजदूरी कितनी कम है अन्य जगह तो मजूरी बढ़ाई गई है, लेकिन यहां क्यों नहीं। हमारे यहांके समाचार भी किसी अखबारों में प्रकाशित नहीं होते कभी। जब तक अखबार के अखबार रंग जायें हमारे समाचारों से ऐसा कोई कड़ा कदम उठाना चाहिये।" गंभीरने गंभीरता धारण करते हुये कहा।

"काफी सोच-विचार के कदम उठाना चाहिये नित्य। बुलंद हुई आवाज को भविष्य में कुछ कठिनाइवश रुक जाना पड़े – यह बिल्कुल अच्छा नहीं।" पंढरी ने कहा।

"ब्रिजलाल, तुम्हें क्या कहना है? धना ने पूछा।

"प्रथम हम अपनी मांगें निश्चित कर लें तत्पश्चात् उन्हें

प्रदर्शनी–यशस्वी हुई और खूब हुई। शहर में अदम्य उत्साह से कित्येकों ने सीखना प्रारंभ किया गली-गली व मोहल्ले मोहल्ले में साक्षरता-वर्गों का जन्म हुआ। स्वयंसेवक भी पढ़ाने के लिये बहुत बड़ी तादाद में मिल गये। चन्द शिक्षकों ने भी वर्गों में पढ़ाना स्वीकार किया। किताब स्लेट व पेन्सिल के लिये अर्थ की आवश्यकता थी। सब ने मिलकर अर्थोपार्जनार्थ एक नाटिका अभिनीत करने का निश्चय किया। घना ने एक सुन्दर शिक्षणात्मक नाटक की तैयारी शुरु की। घना भी इस नाटिका में अभिनय करनेवाला था। लेकिन गोपाल व मोती की अभिनय करने की तिथि निश्चय की गयी। टिकट बिक्री भी हुई। अपेक्षाकृत ज्यादा तादाद में लोग नाट्य प्रयोग में उपस्थित रहे। और नाट्य प्रयोग भी खासा हुआ। गोपाल के गाये गीत को "वन्समोर" प्राप्त हुआ। सबका अभिनय प्रशंसनीय था साक्षरता के लिये काफ़ी अर्थ प्राप्ति हुई इस प्रयोग से। मध्यांतर में घनाने सब के आभार माने। प्रेक्षक–वर्ग में अमुक धनराशि अपनी तरफ से सहर्ष भेट दी। गोपाल व मोती को उत्कृष्ट अभिनय तथा गीत के लिये लिये किसी ने पुरस्कृत किया।

"यह पुरस्कार हमें नहीं चाहिये। साक्षरता–प्रचारार्थ समय आनेपर उपयोग होगा इनका भी।" दोनो युवकों ने उदार मन से पुरस्कार लेते हुए कहा।

इस तरह धीरे धीरे घना के अधिक परिश्रम के परिणा सुन्दरपुर में सेवा ज्योति प्रज्वलित हो रही थी। स्वच्छत ज्ञान, सहकार्यादि तेल का सेवा ज्योति को अखंड रूप प्रज्वलित करने में पूर्ण उपयोग हो रहा था। विद्या

विद्यार्थिनियों को साथ लिये जो आनेवाले भारत के आधार स्तंभ है; घना अपना सेवा–कार्य अविरत रूप से चला रहा था। यूनियन के सभासद भी अपेक्षा कृत ज्यादा बन गये थे। मजदूरों में घना के ठोस कार्य ने नये प्राण फूंक दिये थे। बीच बीच में वह मजदूरों की सभायें भी करता बाहर के व्याख्याताओं को निमंत्रण दे बुलाता भी। चुने हुए होशियार मजदूरों का वह अलग एक अभ्यास–वर्ग भी चलाता था। उसमें वह समझाता कि अलग अलग देशों में मजदूर आंदोलन कैसे हुए, क्यों हुये। उनके विशेष अध्ययनार्थ उसने एक छोटी–बड़ी लायब्ररी को जन्म दिया था। उसमें बहुत कुछ पुस्तकें भी थीं मजदूर आंदोलन सम्बन्धित। उस दिन रात्रिमें घना व कुछ मजदूर कार्यकर्ता गण आपस में चर्चा कर रहे थे।

"और कितने दिन यों ही व्यर्थ चर्चा करें हम? अभीतक प्रत्यक्ष कदम उठानेको बेला नहीं, और क्या? यहांवाले मजदूरों की मजदूरी कितनी कम है अन्य जगह तो मजूरी बढ़ाई गई है, लेकिन यहां क्यों नहीं। हमारे यहांके समाचार भी किसी अखबारों में प्रकाशित नहीं होते कभी। जब तक अखबार के अखबार रंग जायें हमारे समाचारों से ऐसा कोई कड़ा कदम उठाना चाहिये।" गंभीरने गंभीरता धारण करते हुये कहा।

"काफी सोच–विचार के कदम उठाना चाहिये नित्य। बुलंद हुई आवाज़ को भविष्य में कुछ कठिनाइवश रुक जाना पड़े – यह बिल्कुल अच्छा नहीं।" पंढरी ने कहा।

"ब्रिजलाल, तुम्हें क्या कहना है? घना ने पूछा।

"प्रथम हम अपनी मांगें निश्चित कर लें तत्पश्चात् उन्हें

मालिक के पास भेज सोचने के लिये समय दें। मालिक किसी भी हालत में कुछ भी करने के लिये तैयार नहीं हुआ तो आखिरकार हड़ताल का आधार लें। हड़तालाग्नि से पार होना ही चाहिये। ठोकरें खाये बिना मानव प्रगति की ओर कूच नहीं कर सकता कभी।" ब्रिजलाल ने अपने विचार प्रकट किये।

"कुछ न कुछ करना चाहिये। सिर्फ फ़िज़ूल बातें करने से कुछ नहीं होता। झंडा उठा कर आगे वढ़ना यही हमारा फर्ज़ है। चुपचाप बैठना आदमी के लिये अच्छा नहीं।" कुतुब ने अपना मत व्यक्त किया।

"आप तो कुछ बोलते ही नहीं। आपकी क्या राय है घनाभाई?" अर्जुन ने घना की ओर एकटक निहारते हुए कहा।

"मैं क्या कहूं? लेकिन एक दफे सेठजी से मुलाकात अवश्य करूंगा। उनके पास निवेदन करूंगा। हड़ताल कर देना मुश्किल नहीं लेकिन उसे अंत तक यशस्वी ढंग से निभाना कठिन। और फिर हमारी तरफ बेकारी भी ज्यादा। एक काम पर से दूर हुआ तो उसका रिक्त स्थान प्राप्त करने के लिये सैकड़ों मज़दूर आगे आयेंगे। मालिक के पिछलग्गू आसपास के गांव में भटक मज़दूर पूर्ति करेंगे। हमें जो कुछ करना है शांति से करना है। जब तक मैं यहां हूं ज़रा भी गड़बड़ न होने दूंगा गर किसी ने दंगा दस्ती करने की कोशिश की, तो मैं सब से प्रथम अपना सिर ओखली में रखूंगा। लेकिन मुझे ऐसा कोई डर नहीं हैं। सुन्दरपूर के वातावरण में ही सुन्दरता कूटकूट भरी पड़ी है। मालिक के प्रत्युत्तर पर अगली कार्यवाही अवलंबित है। इसके पूर्व तुम सब अपनी युनियन के बड़ी तादाद में सभासद बनने में तो जुट जाओ। छोटे छोटे कार्य तो अभी

हम मन-वचन से ठीक करते नहीं और चले हैं शांति का विचार विमर्श करने । मुझे मुट्ठी भर लोगों द्वारा की गयी क्रांति क़तई पसंद नहीं । जब लाखों लोग जागृत बन एक साथ अपने हक़ों के लिये उठ खड़े होंगे तब एक और ही प्रकार की महान ऐसी क्रांति होती है । हम शीघ्र ही फिर मिलेंगे ।" घना ने सब को विदा करते हुए कहा ।

सब मित्रों के विदा होने के पश्चात घना वहीं बैठा गहरे सोच में पड़ गया । वह हड़ताल के बारे में ही सोच रहा था । गर अपनी गिरफ्तारी हो गई तो पीछे कौन ? इन सब का सही पथ प्रदर्शन कौन करेगा ? सखाराम सहायता के लिये आयेगा क्या ? मजदूर मां बहनों में मन लगा कर काम करने को मालती स्वीकार करेगी क्या ? आदि कित्येक विचार लहरें उस के हृदयोदधि में रह रह कर उमड़ रही थीं । उसमें ही ख़ास बात यह थी कि गर हड़ताल पुकार दी तो आसपास के छोटे गांवों में से नये मजदूर नहीं आने चाहिये । उसके लिये दिन रात अविरत प्रचार करना होगा एक मोटर लारी किराये पर ले आस-पास के गाँवों में प्रचारार्थ फिरे ऐसा एक विचार मनमें तत्क्षण आया । प्रचारक भी तैयार करने होंगे । वह मन ही मन हड़ताल यशस्वी करने की रूपरेखा निश्चित करने लगा ।

और वह नाटिका ? वह एक नाटिका लिख रहा था आजकल । 'सच्ची-संस्कृति' नाटिका का नाम था । उसके द्वारा घनाने अपनी नई दृष्टि लोगोंके सामने रखने की कोशिश की थी । वह हड़ताल प्रारंभ होने के पूर्व यह सब कार्य पूरे करना चाहता था । किसी साहित्य रसिक राजा साहब ने उत्कृष्ट

नाटिका पुरस्कारर्थ मंगवायी थी । सर्वोत्तम नाटिका के लिये ।
पांच हज़ार का नगद पुरस्कार रखा गया था । घना पुरस्कार
का भूखा न था लेकिन यदि पुरस्कार मिल ही गया तो भविष्य
में कभी सहाय होगा ऐसी दृढ़ भावना रखता था ।

रात वहुत हो गयी है । वाहर सर्वत्र निस्तब्धताका साम्र-
ज्य फैला हुआ है । अंधकार के आवरण में लिपटा सारा विश्व
सुख की नींद सो रहा है । और इधर घना लिख रहा था ।
उसे समय का भान नहीं है । वह अपनी कृति के साथ तल्लीन
हो कल्पना में विहार करता है । अपनी लेखनी की अद्‌भुत
शक्ति में नाटिका का सर्वश्रेष्ठ दृश्य रंगने में मशग़ूल है ।
कल्पनोदधि में डुबकी लगाने के हेतु क्षण भर वह आंखें मूंद
शांत वैठा रहा । मानो आगे आलेखित होंने वाली घटना प्रत्यक्ष
उसके अंत,चक्षु समक्ष उपस्थित हो । आंखें खोल वह पुनः मूंदने
जा ही रहा था कि उसे कुछ श्याम रंगीय वस्तु दिखाई दी ।
क्या थी वह ? कितना वड़ा विच्छू ! कांटा ऊपर किये महाशय
पधारे थे और अड्डा जमाया था घना की नोटबुक पर । घना
शीघ्र ही एक तरफ खिसका लेकिन उसके मन में विच्छू महा-
शय को जान से मार डालने की इच्छा जागृत न हुई । विच्छू
महाशय पधारे कहां से ? यह एक उलझन भरा प्रश्न था घना
के लिये । उस समय वह नाटिका के दृश्य में एक प्रेम रस से
शराबोर संवाद आलेखित कर रहा था । प्रेम रश्मियों में सब
कुछ सौन्दर्यमय दृष्टिगोचर होता है । श्याम वर्णीय घटाओं प
भगवान अंशूमालिकी प्रातःकालीन रश्मियां फैली हुई आ
सुन्दर भासित होती है ! ऐसा ही वह कुछ लिख रहा था । उ
के प्रेम की परीक्षा करने तो विच्छू न आया ? उसने संडसी

बिच्छू को पकड़ वातायन में से बाहर फेंक दिया। लेकिन किसी को काटेगा तो ? इस तरह का विचार भी उसके मन में न आया क्षण भर के लिये भी।

वह पुनः अपने कमरे में लौट गया। लिखना रुक गया लेकिन उसके मस्तिष्क में नये ही विचारों ने जन्म लिया। अगर बिच्छू का कांटा तोड़ दिया जाता, तो निर्विष बिच्छू निरुपद्रवी सिद्ध होता। ठीक उसी तरह धनिकों द्वारा नियंत्रित सांपत्तिक-सत्ता उनके पास से छीन ली जायं तो भी बिच्छू की नाईं निरुपद्रवी सिद्ध होंगे। महाविष धर के विषमय दांत तोड़ देने के पश्चात् वह सहर्ष सारे घर में क्रीड़ा करता रहे तो क्या बिगड़ा ? धनिकों के बंदूक की गोलियों से भून दिया जाय ऐसी कोई बात नहीं। लेकिन उनकी निर्बाध सत्ता छीनने की हिम्मत कौन करेगा ? प्रजा द्वारा चुने प्रभावी व्यक्तियों की सरकार ही यह काम कर सकेगी। लेकिन अभी तो दिल्ली बहुत दूर है – स्वराज्य है कहां - वह तो हमसे कोसों दूर है। एक मर्तबा परकीय सत्ता का पतन हो जाय तब आगे की बात।

घना ने लेखनी को आराम देने के हेतु लिखना बंद किया और शय्या पर लम्बा हुआ। नींदिया रानी ने भी शीघ्र ही उसे अपनी गोद में सुला दिया और कल्पना जगत में विहार करने के लिये स्वप्न अश्व भी प्रदान किया।

बिच्छू नींद में घना से कह रहा था कि, "मैं तुम्हारे लिये क्या करूं ? तुमने मुझे प्रेम दिया है ? मैं तुम्हें बदले में क्या दूं ? हम बिच्छू भी कृतज्ञ होते हैं मानव समय आने पर कृतज्ञ नही रहेगा, लेकिन मानवेतर प्राणी जीवन पर्यंत उपकार का स्मरण करते रहते हैं।"

“कहो और कुछ कहो ।” घना स्वप्न में विच्छू की वाणी सुन, कह रहा था उससे ।

“और कहूं । अरे, तुम्हारा मानव-समाज हमें विषैला-विषैला कह पुकारता है निरंतर, लेकिन तुम नही हो क्या विषैले ? अविरत परस्पर एक दूसरे के विरुद्ध नाना प्रकार के षड़यंत्रों की रचना करते रहते हो । हमारे पास तो सिर्फ यह छोटा सा कांटा है, लेकिन तुम्हारे पास तो अगणित हैं । कितनी ईर्षा द्वेष परस्पर रखते हो एक दूसरे से ! सांप बिच्छू के डंक से मानव मृत्यु को प्राप्त होता है । उससे कई गूने अकाल युद्ध, क्षुधा, पूर और वीमारी आदि की वजह मे मृत्यु को प्राप्त होते हैं । ईश्वर द्वारा सर्जित सव प्राणियों में अगर विषैला प्राणी कोई है तो वह मानव सिर्फ मानव ! तुम स्वयं प्रथम सुधरो । मैं अभी तक जहरीला हूं, उसे डंक मारा, इसे कांटा, उस पर टीकास्त्र चलाया,, इसके प्रति मन में वैर वनाके रखा, सर्व प्रथम मुझे निर्विष होने दे — ऐसी भावना कभी तुम्हारे मानव समाज के मस्तिष्क में भी आती है क्षणभर के लिये ?” विच्छू कटु शव्दों में स्वार्थी मानव समाज की टीका कर रहा था । उसकी टीका कव समाप्त हुई । राम जाने, लेकिन अचानक घना घवरा कर श्य्यापर उठ वैठा । उसे लगा, बिच्छू कान के पास है, दीया जलाया उसने और आसपास में सर्वत्र सावधानी से देखा । ना तो कही बिच्छू था न ही अन्य ज़हरीला प्राणी, लेकिन रह-रह कर स्वप्न में श्रवण किये वृश्चि कोपनिषद् की उसे याद आ रही थी । मन द्वारा निर्मित कपोल कल्पित सृष्टि का स्मरण कर एसे वार वार आश्चर्य हो रहा था ।

हमेशा मिल से छुटने पर घना अपने सहकार्यकर्त्ताओं के साथ

मोटर-लारी में सवार हो आसपास के गांवों में प्रचारार्थ फिरने लगा। घना सबको बातें सविस्तार समझाता, गंभीर तथा कुतुब हड़ताल पर रचे गीतों को ललकारते और ब्रिजलाल सबका अनुमोदन करता। किसी एक गांव में प्रश्नोत्तर हुए। कोई सेवानिवृत्त सज्जन उस गांव में निवास करते थे। वे बड़े ही धार्मिक वृत्ति के तथा कर्मठ थे। सभा बीच खड़े हो उन्होंने कहा, "मैं चन्द प्रश्न आपसे पूछूं?"

"शौक से पूछिये।" घना ने कहा। लोगों को आश्चर्य हुआ। वे धुन के पक्के प्रतीत होते थे। उनके दोनो कानों में रुद्राक्ष शोभा दे रहे थे। सिर पर श्वेत पगड़ी पहने थे और शरीर पर घुटने से कंधे तक लम्बा दुपट्टा लटक रहा था। वे प्रश्न कर रहे थे। बिना रुके, विश्राम लिये।

"तुम संसार की सेवा करने निकले हो; लेकिन अपने पास कुछ धर्म वर्म भी है? सुबह में, शय्या त्याग, स्नान भी करते हो क्या? केश बढ़ा कर, बिड़ी सिगारेट दिन-रात फूंकना जो कुछ मिले सो खाना, क्या यही तुम्हारा धर्म? फिर कैसा होगा तुम्हारे हाथ से समाजोन्नत्ती का महद कार्य तुम समाजवादी हो या कम्युनिस्ट? धर्म को अफीम की उपमा देने वाले तुम ही लोग हो न? धनिकों को जो चाहे गालियां बकते फिरते हो – वे ग़रीबों को सताते हैं। लूटते खसोटते हैं आदि बातें सरे आम बकते हो। लेकिन हमारे धर्म का मज़ाक़ उड़ा, मस्करी कर तुम हमारे हृदय को ठेस क्या नहीं पहुंचाते! धनिक यानी शरीफ गुंडा, उनकी वजह से शांत समाज में अशांति की अग्नि प्रज्वलित होती है; ऐसा ही तुम्हारा कथन है न? लेकिन तुम लोग भी गुन्डे नहीं क्या? तुम्हारी बकवास से भी समाज में अशांति

निर्माण नहीं होती क्या ? समाज - शांति में वास्तव में देखा जाय तो धनिकों से वजाय तुम ही लोग ज्यादा वाधक हो। धर्म की टीका करने वालों को तो विना जांच जेलखाने भेज देना चाहिये। अगर मैं अधिकारी होता तो कभी की तुम सव की वड़वड़ वंद कर देता। वाह ! कहते है धर्म यानी अफीम की गोली।"

"ओह, वैठ जाइये। वस करो अव। तुम कितनें काम आते हो दूसरो के ? यों श्रोता-वर्ग में कोई पूछने लगा। लेकिन घना ने सवको शांत किया और उसने एक छोटासा गीत सुनाया।

उपरोक्त काव्य पंक्तियों में वर्णित तरह का धर्म हो तो उसकी कौन टीका करेगा ? आप धर्म धर्म की अर्हनिश रट लगाने वाले समाज मे फैली विषमता को दूर करने हेतु कभी आगे नहीं आते। हो सकता कि हम समय पर स्नान-कार्य से निर्वत्त नही होते। कभी सिगारेट पीते हैं। लेकिन हमारे दूसरे वंधु का संसार सुखमय हो इस हेतुवश सर्वदा अपने प्राण भी देने से लिये तैयार रहते हैं। दूसरो के लिये कुछ नहीं करने वाला लेकिन सिर्फ जपतप और समयपर स्नानादि से निपटनें वाला धार्मिक या स्नानादि जल्दी न करने वाला लेकिन परार्थ प्राणार्पण करने वाला धार्मिक ? जो धर्म अन्याय सहन करना सिखाता है समाज में वही विपमता को शनी मंगल की युति कह पुकारता है। मज़दूर क्षय से वीमार मरा तो व्योमस्थित शनि ग्रह की उसे फोड़ खाती थी ऐसे विधान जो धर्म करत है, उसे हम अफीम की गोली की उपमा देते हैं। मालि महाशय ने सवेतन छुट्टी दी होती, अच्छी हवादार चालें वां

होती, पेट का खड्डा भर सके इतनी मजूरी दी होती, तो क्या मजदूर प्राप्त करता ? उधर मालिक मज़दूर के पसीने कमाई रक़मों से नित नये मंदिरों का निर्माण करता हैं। उस पर स्वर्णिम कल की प्रतिष्ठा करता है, देव मूर्तियों के लिये लाखों की संपत्ति स्वेच्छा से खर्च करता है । लेकिन इधर मज़दूर उसके बाल बच्चे बिना अन्न-जल के तड़पते रहते हैं। इन दरिद्र-नारायण की सेवा क्या धर्म नहीं ? वहां मंदिर निर्माण करने के बजाय यहां चाल बांध कर दी तो धर्म कर्म न होगा ? गधे को पिलाई गंगा भी जब प्रभु तक पहुंच सकती है तो इन श्रमजीवि मानव समुदाय की भक्ति भाव पूर्वक की गई सेवा प्रभू के श्री चरणों में न पहुंचेगी ? हमें लम्बे तिलक रुद्राक्ष माला वाला धर्म नहीं चाहिये । शनि-मंगल का धर्म नहीं चाहिये । तू दरिद्री क्यों, तो कहे तेरा प्राक्तन ! ऐसी अन्धी शिक्षा देने वाला धर्म नही चाहिये । मैं श्रम करता हूं फिर क्षुधित क्यों ? श्रमिकों की प्रतिष्ठा प्रस्थापन करना यही सच्चा धर्म । वेदान्त मे ठीक ही कहा है।

न ऋते श्रान्तस्य सख्याय देवाः ।

जो श्रमिक नहीं उसकी मित्रता देव भी नहीं चाहते। जिसमें लुच्चाई व लफंगापन कूटकूट के भरा पड़ा हो ऐसे धर्म की हम जोरदार टीका करते हैं। समाज में श्रद्धा जमाये बैठी विषमता को दृष्टि से निहारते हुए भी उसे दूर करने की कोशिश न करते सिर्फ़ भरे पेटसे चर्चा करनेवाला धर्म मार्तंड ही क्या है ? धार्मिक तुकाराम महाराज कहते हैं—

"तुका म्हणे व्हावी प्राणासवें साटी, नाहीं तरी गोष्टी बोलूं नये ।"

धर्म यानी परमध्येयार्थ अपने प्राणों की भी बाज़ी लगाने में सर्वदा तैयार रहना, धर्म यानी सबों के विचारों का सम्मान करनेवाला । वही सच्चा धर्म है । और आदि–अनादि काल तक जीवित भी है, ऐसा ही मानवता प्रेरक धर्म हमें निहित है शेष धर्मों का उपयोग ही क्या उसे पाकर ? तुम्हारी गीता में कहा है—

गीता जिन अन्य धर्मों का त्याग करने की शिक्षा देती है । वे कौनसे धर्म ? मैं बड़ा, मेरा जन्म उच्च–कुल में, मेरी ही जाति श्रेष्ठ, धर्म मेरा ही श्रेष्ठ, मेरा ही राष्ट्र सर्व श्रेष्ठ आदि सतरह औ अहंकारी धर्मों को त्यागने का गीता उपदेश देती है । सभी कर्मों को एक तुला पर तोलने का आदेश भगवान गोपाल कृष्ण देते हैं । और वह यह कि "मैं जो कुछ करता हूं" देवता को पसंद आयेगा । इस तुला में अपने कर्मों को रख क्षणभर सोचो । दीन-दरिद्रों के लिये घर वांधना छोड़ भव्य मंदिर निर्माण करना देवता को पसंद आयगा ? आत्मा सो परमात्मा नहीं क्या ? मनुष्य में भगवान नहीं क्या? वह क्या सिर्फ पाषाण-मूर्तियों में ही है? माता के बच्चों को छोड़ उसको अच्छी से अच्छी मिठाई दोगे भोजनार्थ, तो क्या पसंद आयगा ? इसी तरह देव–देवियोंकी करोड़ों संतानो को अन्नहीन, वस्त्रहीन, गृहहीन, ज्ञान–विज्ञान–हीन सुखहीन आनंदहीन और विश्रामहीन रखोगे, और उन्हें पुष्पमाला धूप पूजन–अर्चनादि से रिझाते रहोगे ? उसे हीरे मोती की मणियोंसे सजाते बैठेंगे तो यह सब उस जग-माता को पसन्द आयगा ? हम सच्चे धर्म के उपासक व अनुयाई हैं हम प्रभु के दरबार में गर्दन नमा, दोनों कर जोड़ क

खड़े रह सकेंगे बिना किसे हिचकिचाहट से।

घना अपने अंतरंग के बांध तोड़ अविरत रुप से उसमें रहे तत्त्वज्ञान-नीर को प्रवाहित करते ही आज तक अवसर ढूंढ़ रहा रहा था। और आज सुअवसर प्राप्त होते ही मानो वह रहा था। उसका समाजवाद मानवी मूल्य (कर्तव्य) का पुजारी था। जिस समाज व धर्म में उसके घटक मानव की गर्दन हमेशा नीची रहती है वहाँ कहाँ का धर्म और कैसी संस्कृति? दूसरे के हृदय को स्पर्श कर जाना प्रेमवश इसमें धर्मारंभ है। संतो की यही प्रवृत्ति विस्तार पा "वसुदेव कुटुंबकम्" होती है। वे ही मानव के सच्चे उद्धारक हैं। ग्यानवा-तुकाराम का ही गगनभेदी घोप सर्वत्र सुनाई देता है। तथा ज्ञानेश्वर तुकाराम ने विश्वपर सभी जीव-जंतु पशु प्राखी सुखी हों यही चाहा है। "जो जें वांछील तो तें लाहो।" यही ज्ञानेश्वर महाराज की सबसे बड़ी मनीषा थी।

घनाने कहा, ज्ञानेश्वर महाराज के स्वप्न को सत्य कर दिखाने के लिये ही तो हम सब दौड़ धूप करते हैं। समाजवाद यानी प्रत्यक्ष में आया हुआ वेदांत। हम मारपीट अथवा डराधमका कुछ भी करना नहीं चाहते। लोगों में अपने सिद्धांत को यथेष्ट प्रचार कर उन्हें समझा बुझा जो करना है, वह करना चाहते हैं। यही मेरा वैदिक धर्म, वेद यानी ज्ञान। ज्ञान और विचार शक्तिपर श्रद्धा रख हम आगे बड़ते हैं। मेरा कथन मान्य करो अथवा प्राण लेलूंगा ऐसी दहशतवादी प्रवृत्ति में हमें विश्वास नहीं। हम ऐसी नादिरशाही के क़ायल नहीं। इस देश से परकीय सत्ता को मूल से दूर कर कभी समाजवाद

नाये हम देश में तो जनता जनार्दन को समझा बुझाकर ही
लायेंगे। उन्होंने हमें चुनाव में विजयी किया तो हम लायेंगे।
हम मानवी प्राणों को सबसे ज्यादा पवित्र मानते हैं। समस्त
जीवन पवित्र मानते हैं। तुम धर्म–धर्म की रट लगानेवाले ही
मानवी जीवन की विटंबना करते हो। जो हरिजन बंधुओ को
अपने से दूर रखे, हिन्दु–मुस्लिमों में द्वेष फैलाते रहते हो, धर्म
कार्यों में भेंट देनेवाले, होमहवनादि यज्ञों में पैसे लुटानेवाले,
दानी महात्मा यहां मज़दूरों की तरफ एक सहानुभूति भरी दृष्टि
भी डालने को तैयार नहीं। यह क्या धर्म? यही क्या संस्कृति?
यही मानवता? यही क्या जीवन का जीव आदियों के
प्रति प्रेम!

घना का वक्तव्य जनता एकतान हो श्रवण कर रही थी।
सभामें शांति छाई हुई थी कहीं भी गड़बड़ नहीं हो रही थी।
सभा भी प्रचंड थी वह। ज्ञानेश्वर महाराज व तुकारामबुवा के
अभंग ओवियाँ आदि गाने हुए। वह वक्तव्य दे रहा था उन
सबकी समझमें घना का एक एक शब्द आ रहा था। उन्हें वह
अपरिचित, विदेशी, लंबा तंग करनेवाला किस्सा–कहानी
प्रतीत नहीं हो रही थी। और "सुन्दरपूरमें हड़ताल हुई तो
तुम सब मज़दूर-बंधुओं के प्रति सहानुभूति दिखाओगे अथवा
नहीं? अपने दीन–बंधुओंके पेट पर पैर रखने हेतु तुम मिलमें
नौकरी तो न करोगे? बोलो। मज़दूरों के प्रति ज़रा भी
सहानुभूति तुममें हो तो हाथ उपर उठाओ।" घना के यों
कहते ही सैकड़ों की तादाद में सभामें से हाथ उपर उठे।
अनेक माँ बहनो ने हाथ उपर किये। घनाका वक्तव्य पूरा
असरकार हुआ था सभा पर। घना को अत्यंत ही खुशी हुई।

राष्ट्रगीत होने के पश्चात सभा बरखास्त हुई । सब अपने गांव व घर गये । घना की मोटर लारी अन्यत्र चली गई प्रचार करने के लिये । सर्वत्र धूम धड़ाके से प्रचार हो रहा था ।

और उस दिन सुन्दरपुरमें प्रचंड सभा हुई । सभा के पहले सारे शहर में मशाल जुलुस निकाला गया था । गगनभेदी घोषणाओं व जयजयकारों से चारों दिगंत गूज रहे थे । "वेतन वृद्धि तुरंत हो ।" नारा सर्वत्र गूंज रहा था । सुन्दरपुर के वातावरण प्रक्षुब्ध हो उठा था । ये जागृत मजदूर क्या करेंगे और क्या नहीं यही प्रश्न सबकी जबान पर था । लेकिन सर्वत्र शाँति थी । सभा के आरंभ में पंढरीने एक सुन्दर गीत अपने मधुर गलेसे ललकारा ।

गीत के पश्चात कितने एक मजदूर कार्यकर्ताओं के भाषण हुए सभामें मजदूर भगिनी पार्वती ने रंगमंच पर आते हीं शब्दों की झड़ी लगा दी सभा में बोली, 'मेहनत मजदूरी कर हम दिन रात मरते है लेकिन देह ढंकने के लिये ये फटे पुराने चिथड़े । लाखों गज कपड़ा वहां तैयार होता है लेकिन तैयार करने वाले ही ठीक अर्ध नग्न रहते हैं । सर्वत्र पाप का बाजार हैं । और सुन्दरदास उसका निरंकुश मालिक एक और भव्य मंदिर बनवाता है । और दूसरे हमें प्राणों से मारता है । यह कौनसा दुनियासे अलग उसका धर्म ? यह धर्म मानव का नहीं । दानव का है दानव का । हम हड़ताल पुकारेंगे भूखे मरेंगे लेकिन ऐसा अन्याय सहन नहीं करेंगे । शहर ने हमें एक आवाज से साथ दिया है । मेरे पास देने के लिये कुछ भी नहीं । फिर भी हड़ताल फंडशुरू किया तो में अपनी उंगलीमें रही एक मात्र अंगुठी सहर्ष उसमें दूगी । यही अंगूठी उनकी स्मृति है जो

सी मिल में काम करते क्षय ग्रस्त हो मृत्यु को प्राप्त हुए। लेकिन मालिक ने मेरे वाल-वच्चों के लिये कुछ भी दिया क्या? सिर्फ यही एक अंगुठी मेरा आधार है फिर भी वह मैं हंसते हंसते दान करूंगी।

तालियोंकी गड़गड़ाहट से सभा उठी, साथ ही व्योम और पृथ्वी भी। थोड़ी देर पश्चात घना समारोप करने के लिये खड़ा हुआ। उसने अपने समारोप भाषण में निम्न वातें जाहिर की।

“मैं सेठ सुन्दरदास से मुलाकात करने वाला हूं। मजदूरी में वृद्धि, और पहले लगातार दस वर्ष तक तनख्वाह के समय संस्कृति–मंदिर के लिये प्रति रुपया पाई पैसेवाली रकम वापस, ये दो मांगे खासतौर से उनके समक्ष रखूंगा और उसपर सविस्तर चर्चा भी करूंगा वैसे तो छोटी मोटी वहुतसी अन्य मांगें भी लेकिन खास तो ये दो ही हैं। मालिक तैयार होंगे–ऐसा प्रतीत तो नहीं होता लेकिन हमने हड़ताल करने का तय कर लिया तो सबों को एकता के सूत्र में वंधकर कदम उठाना होगा। एक दफे हड़ताल पुकार लेनेपर मैं तुम् पीछे पैर हटाने न दूंगा। हड़तालावधिमें फंड की सख आवश्यकता पड़ेगी तो अगले माह की तनख्वाह के समय फंड पैसे दे देना। ठीक इसी तरह एकाध नया काम धंदा भी सं रखो तो वेहतर है। हमें खाली हाथ नहीं वैठना है। प्रत्येक के ध्यान में रहे। कुछ प्रप्त करेंगे तभी हड़ताल काल चल सकेगी। एक वात की ओर सव लोग ज्यादा दें। हड़ताल शांति से आरम्भ कर हमें समाप्त भी उसी से करना है। इसके वीच अशांति का नामोनिशान तक

नागरिक बंधुओं का आद्य कर्तव्य है कि वे हमारे न्यायमय आंदोलन में पूरा सहकार्य दें। अगर अग्नि-परीक्षा की वेला आई तो हमें खुले हाथों से सहायता दें। आप सबों का संसार मजदूर व किसानों पर ही पूरी तौर से आधारित है। मजदूर मिल में काम न करेगा तो आप सब वस्त्रहीन हो जायेंगे। आपके शरीरपर वस्त्र होते हैं। आपके नित्य प्रति प्रयोग में आनेवाली शय्या और चादर, कहाँ से आती हैं? ये सब वस्त्र, टेबल क्लॉथ, शर्टादि, धोती, पगड़ी, अनेक स्वरोंमें अपनी राम कहानी सुनायेंगी आपको, कि हम पसीने से निर्माण हुई हैं। श्रमिकों के पसीने से हमारा जन्म हुआ है। लेकिन वही श्रमिक आज वस्त्रहीन है-नंग-धड़ंग है और भूखा-प्यासा। जनता जनार्दन में कृतज्ञता होगी तो वह मजदूर के पक्ष व मांग को उठा लेगा। मजदूर सुखी तो सारा संसार सुखी-यह ध्यान में रहे, सदा।"

सभा अदम्योत्साह बीच समाप्त हुई। सारे गांव के लबों पर एक ही चर्चा का विषय था, हड़ताल होगी क्या?

हड़ताल के पूर्व

दिवानखाना भव्य था और करीने से सजाया हुआ था। थोड़े अंतरपर कोचों की हारमाला लगी हुई थी। और ठीक वीचोबीच बैठक थी। गादी व गोल तकियोंका पारावार न था। एक तरफ पूज्य महात्मा गांधी की पूरे कदकी तस्वीर भी थी। घना वहां बैठा। व्यवस्थापक महोदय व सेठ श्री. सुन्दरदासजी का इंतजार कर रहा था। उसने खिसेमें से तकली निकाली व रामनाम की मन ही मन धुन जमाये कात रहा था। वह क्षण भर में तन्मय हो गया सूत कातने में।

"वस करो अपने सारे ढोंग" व्यवस्थापक ने प्रवेश कर कहा।

"ढोंग मैं कर रहा हूं? इसका तो ईश्वर को ही पता है। लेकिन आप तो व्यर्थ में ढोंग न रचाइये। यहां भारत को पवित्र आत्मा की तस्वीर टंगी हुई है। उसका स्मरण कर ही तो हर घड़ी व्यवहार करते न?" घनाने सीधा प्रश्न किया।

"महात्माजी तो मालिक को ट्रस्टी कहते हैं। जव कि आपका प्रचार तो उससे अलग ही ढंग का होना है।"

"ट्रस्टी का अर्थ ही आप क्या लेते है?"

"लेकिन अज्ञानों के पालक वनना अर्थात ट्रस्टी होना।

मजदूर अपना हित अहित क़तई नहीं समझते। हमें उनके हिताहित की चिंता करनी पड़ती है। हमें रोज-ब-रोज कोर्ट कचहरियों को मुलाकात देनी पड़ती है। ट्रस्टी यानि क्या हमें ज्ञान नहीं?"

सचमुच आपको कुछ भी ज्ञान नहीं पूज्य महात्माजी द्वारा व्याख्या की हुई ट्रस्टीशिप का यह अर्थ नहीं। मजदूरों को अपने मालिक से कहना चाहिये, विनति करनी चाहिये "हम अपनी कड़ी मेहनत से उत्पन्न की संपत्ति आपके हवाले करते हैं। उसे ठीक तरह सम्हालिये। बढ़ाइये। व्याज के स्वरूप में किसी को दीजिये अथवा अधिक उत्पादन योजना में लगाइये। जब हमें आवश्यकता महसूस होगी आपसे मांगेंगे। मँहगाई की वजह से तनख्वाह कम पड़ती होगी तो कहेंगे कि तनख्वाह बढ़ाइये। और यह सब करने के लिये, हमारी कष्टोपार्जित संपत्ति की ठीक तरह से व्यवस्था करने के लिये (परिणाम स्वरूप) अपने लिये सौ दो सौ रुपये कमिशन लीजिये। महात्माजी ने तो एक दफे कहा था मजदूर अगर पांच रुपये लेने को कहे तो मालिक को पांच रुपये ही लेने चाहियें। महात्माजी की ट्रस्टीशिपका ऐसा चमत्कारीक रहस्य है और क्रांतिकारक अर्थ समामा हुआ है?

और मालिक को मजदूरों को विरोध दर्शाने के शांत रीति से अहिंसक सत्याग्रह का अवलंब करना चाहिये। यह भी पूज्य गांधीजीने ही कहा है। है क्या यह अर्थ पसंद? कहिये इस ट्रस्टी होने के लिये तैयार है क्या आप? नही होंगे तो गणना पाखंडियोंमें होगी। फिर क्यों ये तसवीरें, यह सादगी, छद्म वेष? किस लिये यह बगुला-भक्ति और ये सारे ढोंग?"

"हम गांधीजी द्वारा, निर्धारित ट्रस्टीशिप का अर्थ हमारे

कीलों से पूछेंगे । मुन्शीजी से दरियाफ्त करेंगे ।" "विनोबाजी
पूछिये—मश्रुवाला साहब से पूछिये ?"

"लेकिन उन्हें कहाँ कानूनी भाषा समझती है ?"

"लेकिन सत्यकी भाषा के तो वे माहिर है न ?"

"दुनिया सत्य पर नहीं चलती । चादीका रुपया वाजार में नहीं चलता । उसमें अन्य धातु मिश्रण करनी ही पड़ेगी । तव कहीं खनन्न् वजेगा व वाजार में भी निस्संकोच जायगा ।"

"जाने भी दो यह सब चर्चा । अब हम अपने मुद्देपर आये । आपका कहना क्या है ? वर्तमान में सभा, प्रभात-फेरियाँ वगैरे किस लिये और जलती हुई असंख्य मशालोंवाले जुलूस क्यों ? गांव को क्या आग में भस्म कर देना है ? आप सख्त टीकाएं करते हैं । गालियां देते हैं । आप तो कृतघ्न हैं । जिस उदार हृदय मालिक ने इतने सारे वेकार मज़दूरों को रोटी और रोज़ी दी उसी को आप व आपके साथी गण चोर और लुटेरे कहते हैं ।"

"आपकी गीता उसे चोर घोषित करती है । वेदांतों के ऋषीगण उसे चोर कहते हैं । गीता कहती है कि दूसरों की क्षुधा मिटा शेष रहा खाओ वही अमृत है । लेकिन दूसरों की क्षुधा न मिटाते उससे क्रूर मस्करी करते रहना चोर होना है आप अपनी छोटी कार के लिये सुन्दर अस्तवल निर्माण क करते हैं; लेकिन मजदूरों के लिये चालें नहीं वांधेंगे । एं रात दिन कार्य करता रहे यंत्र की उत्पादन शक्ति कम न इसलिये उसे आवश्यक सामग्री से सज्ज करेंगे । लेकि जीवित यंत्र मौजूद रहे, उनके शरीर के अवयवों को पुष्ट के लिये उचित खाद्य सामग्री प्राप्त हो इस हेतु से ज़रा भी त

में वृद्धि नहीं करेंगे। सिर्फ अधर्म भरा है आप और आपके धनिक वर्ग में।"

"सुन्दरदास और अधार्मिक? उन्होंने भव्य राम मंदिर का निर्माण किया है। संस्कृति-मंदिर की नीव रखी है। हजारों लाखों रुपये दान स्वरूप पानी की तरह बहा दिये। और वे अधार्मिक।"

"जो दाता संपत्ति एकत्र कर उनके हवाले करता है, उस के लिये क्या किया, कहिये? अन्यत्र किये दान-धर्म की लंबी सूची यहां न पढ़िये। मजदूरों की मजदूरी में वृद्धि करेंगे क्या?"

"फिलहाल की मजदूरी बिलकुल ठीक प्रमाण में है। मजदूरी में वृद्धि करने पर भी उनका समाधान होगा अथवा नहीं, यह भी विचारणीय प्रश्न है। वे शराब, जुआ और सिनेमा में ही जायेंगे। आखिरकार।"

"सारा दिन सख्त परिश्रम करने वाला मजदूर महीने में दो चार दफे सिनेमा देखने चला गया तो क्या उसे हम ऐश कहेंगे? और सभी मजदूर कोई शराब पान नहीं करते, जुए में पैसे नहीं गंवाते। गरीबों के दुःख पर दाग न दीजिये - उनके हृदय मे हरे घाव पर निमक न छिड़काइये। उनके बारे में आपके मन में कितनी सहानिभूति है - मैं अच्छी तरह समझता हूं उस दिन पार्वती का पति क्षय से मृत्यु का शिकार हुआ। उसे कुछ दिया भी किया? आपकी ही मिल में तो रात-दिन काम कर अपनी हड्डियों को सड़ा लिया विचारे ने।" ऐसा कोई करार तो नहीं था।"

"मानव धर्म भी तो कोई चीज है ना? कहते हैं कि उसे मजदूरी दे हम उस पर बेहद उपकार करते हैं। आठ आने

ते हैं सारे दिन की मेहनत के बदले में। लेकिन उसके पास
वीस वीस रुपये मूल्य का उत्पादन करवाते हैं। आठ आने ही
देने है तो उसके बदले में आठ आनें का ही काम लीजिये –
एक रुपये का लोजिये। लेकिन काम तो लेंगे बीस रुपये का;
और हाथ पर सिर्फ आठ आनें के पैसे रखेंगे न चाय न पानी
के लिये एक पाई भी ज्यादा। जहां तहां चोरों का बाज़ार है,
चोरों का!"

इतने में ही सुन्दरदास ने प्रवेश किया वहां। व्यवस्थापक
जी खड़े हो गये। घना भी खड़ा हो गया। उसनें नम्र बन
दोनों हाथ जोड़ वंदन किया।

"किस लिये चोर को वंदन?" हास्य विखेरते सुन्दरदास
ने घना की ओर एक दृष्टि फेकते हुए कहा।

"अन्य चोरों के बनिस्बत आप लाख दर्जे अच्छे हैं। किसी
प्रकार का दुर्व्यसन तो आपको नहीं है। संस्कृति, ज्ञानादि उच्च
विषयों के रसिक तो आप हैं। दान – धर्म भी आप प्रमाण में
करते हैं। आप का अगर कोई पाप है तो सिर्फ एक ही कि
जो संपत्ति आपके हवाले, कड़ी मेहनत से प्राप्त कर, करता है,
उसके प्रति आप पूर्णतया कृतघ्न हैं।

"उन्हें तनख्वाह देते हैं।"

"लेकिन इस तनख्वाह में तो उनका जीवन–निर्वाह न
होता।"

"तो उन्हें मिल की नौकरी छोड़ देनी चाहिये।

कितने एक आने के लिये तैयार हैं।"

"भूल जाइये यह सब। अब पहले वाले दिन नहीं
मज़दूर युग का आगमन होने वाला है। संसार भर में

"लेकिन सव वातें ज्ञात होनेंपर शीघ्र ही त्याग पत्र दे वहाँ से वाहर निकल पड़ा।"

"और यहाँ असंतोषाग्नि भड़कानें का धंदा करने लगे। हमारे शांत कस्वे में अशांति का वीज वोना ही क्या आपका धर्म है?"

"लोकमान्य तिलक को भी तो अंग्रेज ऐसा ही कहते थे. एक समय पूज्य वापूजी ने ही कहा था, 'अंग्रेज़ी राज्य के विरुद्ध साधारण जनता के हृदय में अप्रीति निर्माण करना ही मेरा धर्म है।' न्याय का पुजारी अशांति से भयभीत नहीं होता। मरे हुए मुर्दे को जीवित करना ही क्या अशांति है? स्वाभिमान पूर्वक व न्याय पद्धतिसे जिंदगी व्यतीत करने का उपदेश देना ही क्या अशान्ति है? शांति का अर्थ यह है क्या मुट्टीभर गर्भ श्रीमंतों का संपत्तिके झूले में झूलना और दीन-दरिद्रों का फुटपाथ पर क्षुधा पीड़ित पड़े रहना।"

"गांधीजी पराई सत्ता के विरूद्ध अशांति के बीज वोते थे। स्वजनों के विरूद्ध नहीं।"

"स्वजन भी अन्याय-जुल्म ढायेंगे तो? गांधीजी ने क हैं, 'उच्च वर्ग से अव मैं निम्नस्तर पर जीवन निर्वाह क वाले जनता जनार्दन को उपर उठाऊंगा ताकि लब्ध प्रति अपने आप धड़ाम से नीचे आयेंगे।"

"ये महात्माजी के शव्द?"

"हाँ। उनके ही? स्वतंत्र हिन्दुस्तान अव एक दि आर्थिक विषमता सहन नहीं करेगा, ऐसा भी उन्होंने आप कान होते हुए भी वहरे हैं। सुनते भी हैं तो सि लाभ के वाक्य ही?"

"आप भी तो दूसरा क्या करते हैं ?"

"हम प्रत्येक पहलू से विचार करते हैं। खैर जाने दीजिये यह सब । हां, तो बताईये आप क्या करेंगे ?"

"घनश्याम, व्यर्थ में अपने जी को क्लेश न दो ? मेरे साहित्यमंत्री बन जाओ। और नित्य ही मुझे साहित्याकाश के कल्पना व्योम में बिठा क्रीड़ा कराना।"

"भुलावे में किसे डालना चाहते हैं आप ? मुझे ना ही संपत्ति की और ना सुख की लालसा है। श्रमिकों का सिर संसार के सामने अभिमान के साथ उठवाये, रखना व उन्हें स्वाभिमान पूर्वक जीना-सिखलाना ही मेरा आद्य कर्तव्य! कहिये। तो आप क्या करेंगे।"

"कुछ भी न किया तो क्या आप हड़ताल करेंगे ?"

"सब उपायों पर पानी फिरने के बाद फिर हड़ताल ही रामबाण उपाय है!"

"अहमदाबाद में जब कुछ दिन पूर्व महात्माजी के नेतृत्व में हड़ताल टिक न सकी; तीसरे ही दिन मजदूर काम पर जाने लगे। फिर तो गांधीजी ने उपवास शुरू किया। घनश्याम, जैसी कि तुम्हारी कल्पना है हड़ताल सरल बात नहीं है। बाल-बच्चों को क्षुधा की असह्य पीड़ा से तड़पते देखना पड़ता है। दूकानदार उधार नही देता। हड़ताल की भयंकर आग में गरीब मजदूरों को जलने न दो।"

"राजकीय स्वातंत्र्य प्राप्ति हेतु समस्त देश को आग में से गुजरना पड़ा। सोना भी तो अग्नि में ही गिर कंचन का रूप धारण करता है ना। पूज्य बापू, लोकमान्य तिलक आदि देश की पवित्र महान आत्माओं ने देश की साधारण जनता को

अग्निदिव्य करने का आदेश दिया । व क्या पागल थे ?”

“लेकिन इसमें आपका प्रयोजन ?”

“आर्थिक स्वातंत्र्य ! सिर्फ राजकीय स्वातंत्र्य ले कर
चाटना है क्या ? विजयश्री को वरने के लिये त्यागाश्वरी
होकर जाना पड़ता है । मजदूर आज त्यागवृत्ति अपनायेंगे
तो उनके वंशजों को ही उसका सुफल प्राप्त होगा । अमेरिका
का मजदूर वर्ग ५० वर्ष के पूर्व गोलीबार में आहत हुआ,
फांसीपर झूल गया लेकिन कार्य करने का समय ८ घंटे हो
गया । कोई किसी को मुफ्त में नहीं देता ।”

“आपको सरकार ने गिरफ्तार कर लिया तो ?”

“मैंने क्या पाप किया है । कौनसा अपराध ?”

“अशांति निर्माण करने का । धर्म की कड़ी टीका
करने का साधारण जनता की धार्मिक भावनाओं को ठेस
पहुंचाओगे तो समाज में प्रक्षोभाग्नि धू धू करती भड़क उठेगी ।
धर्म यानी क्या अफीम है ?”

“हाँ अपने प्राक्तन की वजह से तू दरिद्री है । शनि
मंगल तुझे सता रहे हैं । राहुसे बचने के लिये बाह्म–भोज
देना होगा । ऐसा कहनेवाला धर्म अफीम नहीं तो और क्या
लेकिन जो धर्म प्राणिमात्र को आत्मवत मानने का उपदेश दे
है वह अफीम नहीं बल्कि अमोल अद्भुत संजीवनी है
भगवान वुद्ध व तीर्थंकर महावीर से महापुरूष खड़े रहते
और चराचरमें से उत्क्रांतित उनके मनको–हृदय को
चराचर के विषय में अपनापन लगता है, उनके प्रति सद्भ
व समभाव पैदा होता है ऐसी अलौकिक भावना अफीम
कहलाती । वह धर्म है क्या ? आपके तन मन में रोमरो

मजदूरों के दुःखों में कभी सहभागी भी बनते हैं क्या ? आपके विड़ला सेठजी ने फर्माया कि मंदिरों पर हमारा क़तई विश्वास नहीं।' लेकिन भव्य अलिशान मंदिरों की निर्मिति कर, धर्मवीर के नाते जनता–जर्नादन के समक्ष जाने में हमें हिचकिचाहट कभी नही ! संस्कृति रक्षक का बाना धारण कर सर्वत्र जाने में हर्ज भला किस बात का। ये सब संस्कृति के रक्षक अथवा भक्षक ? और डालमिया सेठ ने मजदूरों को बतलाया पैसा यह तो सांसारिक माया मात्र है। लेकिन खुद सेठजी सुख की बन्सी बजाते हैं। एक शादी, दूसरी शादी और तीसरी शादी ! स्त्रियां तो उनके लिये सब्जी से सस्ती प्रतीत होती हैं। सुन्दरदास, ऐसे ही लोग आज के जग में धर्म व संस्कृति के उद्धारक माने जाते हैं—उनका हर जगह सम्मान किया जाता है। यह कितना बड़ा विरोधभास !"

"आपकी वक्तृत्व-शक्ति गजब की (अद्भुत) है।"

"आपके प्रमाण–पत्र की कोई आवश्यकता नही।"

"घनश्याम, हड़ताल करने की कल्पना भी की तो याद रखना गिरफ्तार किये जाओगे।"

"सरकार सिर्फ आपकी ही है ?"

"तो फिर है किसकी ?"

"ग़रीब–दीन–दरिद्रों की नहीं ?"

"शब्द कहने को ग़रीबों की, लेकिन सूत्र संचालक तो हम ही है न। और फिर संपत्ति से किसको हथिया नहीं जा सकता ? सारा का सारा अधिकारी वर्ग हमारे ही हाथ की कठपुतली है। और तो और अगर चाहूं तो कल ही आपको सीमा पार करवा सकता हूं।

“अच्छा । तो यही आपकी संस्कृति है ना ? अच्छा हुआ आपकी ही ज़बानी आपके भयंकर षडयंत्र का भंडा-फोड़ हो गया । मेरे मन के किसी कोने में आपके प्रति आदर की भावना आज तक सोई पड़ी थी, लेकिन वह भी हवा हो गयी ।”

“तुम्हारे आदर की हमें कोई आवश्यकता नहीं । जब तक अंग्रेज़ी, हिन्दी, मराठी, गुजराती आदि समाचार पत्र हमारी प्रशंसा के पुल बांधते हैं, अपने कॉलम के कॉलम हमारे गुणगान से भरते हैं, तब तक हमें किसकी भीति ? संपादक का कान पकड़ हम लिखावते हैं । पूरी तनख्वाह अवश्य देते हैं लेकिम उसकी बुद्धि पर लट्टू होकर नहीं, बल्कि बुद्धि का दुरुपयोग करने के लिये । उसकी स्वतंत्रता बुद्धि को मारने हेतु । भीष्माचार्य जैसे विद्वान, बलाढ्य भी जब अर्थ के दास बन गये तो इन बेचारे मामुली संपादकों की क्या मजाल जो सर भी उठावें? तुम्हारे विरुद्ध अभी विषैला-प्रचार शुरू करवाता हूं । और ऐसा सताता हूं, ऐसा सताता हूं कि काटो तो खून नहीं आप समझते क्या है ?

‘मैं अच्छी तरह समझ गया कि आप एक द्रव्यान्
व्यक्ति है ।’”

“चुप रहिये ।”

“अच्छा नमस्ते ।”

“सुन्दरपुर से निष्कासित न किया तो मेरा सुंदरदास नहीं ।”

“ईश्वर द्वारा निर्मित हुई पृथ्वी बहुत विपुल और
है । फिर मरने पर ३।। हाथ की भूमि ही पूरी होती है
नहीं । साथ में ज़्यादा भी ले तो नहीं जा सकते ।”

घना वहां से चला गया । अब वहाँ श्मशान शांति फैली हुई थी ।

'जल लाऊं' व्यवस्थापक ने पूछा ।

"एक गिलास ले आओ ।" मालिक ने आदेश दिया ।

थोड़ी देर पश्चात्, गिलास भर जल पीके सुन्दरदास ने व्यवस्थापक से कहा —

"हाँ, तो फौजदार व न्यायाधीश तो तुम्हारे परिचित ही हैं। उन्हें सब बातों से ज्ञात कर दीजिये और पैसों की तरफ ज़रा भी न देखना। किसी न किसी तरह इसका कांटा निकालना ही चाहिये ।"

"यह सब मेरे जिम्मे । मैंने वैसे तो सब बातें उनके कान पर डाल ही रखी हैं। उन्होंने कहा, निश्चित रहिये । आप विश्रांति लीजिये । आपको बहुत कुछ क्लेश हुआ होगा व्यर्थ की चर्चा में ।"

"अच्छा तो मैं जाता हू ।"

सुन्दरदास चले गये। व्यवस्थापक अपने षड़यंत्र को सफल बनाने के लिये आवश्यक सामग्री एकत्रित करने में लग गये । मज़दूर-वर्ग में वायुवेग से समाचार प्रसारित हो गये कि घना व सुन्दरदास मिलने से कोई भी मांग पूरी न हो सकी। सर्वत्र असंतोषमय वातावरण फैल गया था । हड़ताल के सिवाय दूसरा चारा न था । एक दफे शक्ति की कसौटी कर देखनी चाहिये। घना सचिंत था। वह गिरफ्तार हो गया तो? उसे अपनी अनुपस्थिति में ? यही विचार उसे बार बार सता रहा था। हड़ताल का नेतृत्व करने के लिये कौन तैयार होगा कौन मज़दूरों में धीरता का शंख फूकेगा? सखाराम ! हां सखाराम

ह सब कर सकता है। लेकिन सखाराम आयेगा? उसकी
हन आयेगी? लाभ ही होगा! दोनो आ गये तो कितना
अच्छा होगा।

उसने मन-ही-मन में सखाराम को पत्र लिखने का निश्चय
किया। और रात्रि में हम मज़दूर कार्यकर्ताओं से सलाह मश·
वरा कर घर आके उसे पत्र लिखने बैठा।

प्रिय सखाराम,

काफी लम्बे अर्से के पश्चात् पत्र प्रेषित करने जा रहा
तुम्हें मेरे आन्दोलन की सूचना नहीं होगी। इसी बीच सार
तहसील का तूफानी दौरा कर आया हूं। अभी परसों ही तो
सेठ सुन्दरदास जी को मिला था। लेकिन मिलने के अंत में
निराशा को ही गले लगाना पड़ा। वे कुछ भी करने के लिये
तैयार नहीं। अब हड़ताल के बजाय कोई उपाय ही शेष न
रहा। लेकिन हड़ताल प्रारंभ होते ही मेरी गिरफ्तारी अटल-
अचल है। तुम यहां आओगे क्या? कुछ नहीं तो मेरी गिरफ्तारी
हो जाने के बाद तो आओगे न? मेरी गिरफ्तारी के पहले आ
जाओ तो और भी अच्छा। मैं सब बातें तुम्हें अच्छी तरह से
समझा सकूंगा। सबों से परिचय करा दूंगा। और हां! मालती
आये तो और भी अच्छा! वे मुझे प्रायः पूछा करती थी
उनसे काम होगा अथवा नहीं। वह मन लगा कर काम
सकेगी। उनके जीवन में भी अदभुत आनन्द का निम
होगा। कर्महीन जीवन से वे ऊब गयी-सी लगती है। दे
विचार कर। हो सकता है कि तुम्हें भी कृष्ण मंदिर की
कात लेनी पड़े। लेकिन उस में बुराई ही क्या हैं? बड़ों
ने किया वही हम भी कर रहे हैं। इस बात पर गह

विचार विनिमय कर प्रत्युत्तर देना। शेष सबको मेरा प्रणाम।

तुम्हाराही
घना

सखाराम कुछ कार्य वश उस दिन कहीं बाहर गांव गया हुआ था। बड़े भैया की पत्नी अभी अपने मैके से लौटी न थी। मालती अकेली ही घर में थी। डाकिया घना का पत्र घर के दालान में डाल चला गया। उसने पत्र हाथ में लिया तो उस पर सुन्दरपुर की मुहर पड़ी हुई निहारी। घना का पत्र। क्षण-भर में उसे घना की याद हो आयी। कभी कभी घना की मूर्ति उसके नयनों के समक्ष आके खड़ी हो जाती थी। लेकिन वह उसपर पर्दा डालने की कोशिश करती थी। बावरे मन की निरर्थक आशा नहीं रखनी चाहिये ऐसा वह प्रायः सोचा करती। लेकिन आज उसका पत्र आया था। क्या होगा भला उसमें। मेरे विषय में कुछ होगा क्या उसमें ? भैया उसके पास कुछ बोले होंगे क्या ? बड़े भैया की तो तीव्र इच्छा थी। पूछके तो देख, ऐसा भैयासे बड़े भैयाने कहा भी था। लेकिन भैयाने तुरन्त इन्कार कर दिया। न मालूम क्या होगा इस पत्र में ? पुनः बीमार नहीं पड़ गये ? यहां पर आये तो तनमन से उनकी सुश्रुषा सेवा करूंगी। पुनः एक बार उस तलैया के किनारे ठीकरीका खेल खेलेंगे। तुम्हारे पत्थर को तो मानो पर लग गये हैं—ऐसा ही तो वे बोलें थे पिछले दफे। हंसी भी कितनी मधुर ? आंखों में असीम करुणा लेकिन कभी कभी सात्विक संताप से आंखें लाल वीर बहुटी-टी सी बन जाती थीं। सचमुच ! घना नाम कितना मोहक है ? मेघराज कभी गर्जन—तालपर नृत्य करेगा तो कभी मौन एकादशीका व्रत अंगिकार

र लेगा । कभी भास्कर की रश्मियों से होली खेलेगा । उसे घर है ना दर । कभी दूर की यात्रा पर जाता है तो कभी बावरा बन पृथ्वी–सुन्दरी के निकटस्थ खींचा आता है । अपना पूरा जीवन भू–नटी को सजाने में लगा देता है । सृष्टि रानी को हंसा–हंसाके नित नयी लीलाका सर्जन करता है । घना, तुम्हारा नाम भी कितना आनंददायी ! तुम किस भाग्यशाली नारी की जीवन-भूमी को अपनी प्रेमदृष्टिसे हरी–भरी करोगे ? मज़दूरों की, श्रमिकों की; हां न ? और मैं ? मुझे कभी न दोगे प्रेम ? मेरे प्रति क्या कभी सहानुभूति न दिखाओगे ?

हाथ में पत्र ले मालती कल्पना लोक में कभी की खो गई थी । स्नेहमई स्वर्गीय मांकी अकस्मात हो आई । मृत्यु समय उसने कहा था, "तेरा कल्याण होगा पुत्री ।" क्या मांके शब्द गलत साबित (सिद्ध) होंगे ? हृदय की गहराई से उत्पन्न उदगार स्वयं परमेश्वर के होते हैं । मानो, यह वेद–वाणी होती है, अपौरुषेय वाणी है वह क्या कर गलत सिद्ध होगी ? इस प्रकार की कित्येक विचार-लहरियों ने उसके ज्ञानतंतुओं को चारों ओर से घेर लिया। उसने पत्र पर प्रेमपूर्वक दृष्टिपा कियां । अक्षर क्या ही सुन्दर है ? उनका समस्त जीवन सुन्दर से भरा पड़ा है – सौंदर्य तो उनकौ चेरी बनी फिरती है । फिर उनके जीवन में किसी चीज़ की कमी नहीं ? समाज के स्वर्गीयानन्द से क्या वाकई उनकी जीवन परिपूर्ण होगा ? किसे पता ? मै पागल हूं । व्यर्थ में ही आशा क्यों किसकी ?

"मालती, जा अपना सीलाई का काम देख । यहां के घर सेवा करने का जितना अवसर मिले, करती

ज्यादा इच्छा न रख।" ऐसा ही उसकी अंतरात्मा कुछ कुछ छुट पुटा रही थी। उसने धीरे से नयनों में आये अश्रु बिंदुओं को साड़ी के छोरेसे पोछा। उसने पत्र को खोलने का क़तई प्रयत्न नहीं किया। 'मुझे किस बात का अधिकार' यों निश्चय कर वह पुनः कपड़े सीने बैठ गयी।

दो-तीन दिन और व्यतीत हो गये लेकिन सखाराम घर नहीं लौटा। पुनः घर त्याग कर जग भ्रमणार्थ निकल पड़ा क्या? अब तो मां की ममता का भी अदृश्य पाश न था अतः चला गया क्या? लेकिन इतने दिनो के दीर्घानुभव से मालती धैर्य रखना सीख गई थी। पत्र वैसा ही पड़ा रहा प्रत्युत्तर की बेचैनी से इंतजार करता। दो दिन व्यतीत हुए, चार दिन हुए लेकिन प्रयुत्तर का नाम तक नहीं। सखाराम वकालत का अभ्यास कर रहा था। वह आयेगा तो भी कैसे? हो सकता है कि बहन की शादी ठीक करने कहीं गया हो। घना के सामने सुशील शांत मालती की मूर्ति क्षणभर में साकार हो उठी। उसके पास वह हृदय खोल कर बोला करती थी, उसके साथ निःसंकोच खेला करती थी। उसकी यहां आने की तीव्र लालसा भी होगी उसे सार्वजनिक क्षेत्र में प्रविष्ट हो सेवा करने का बेहद शौक भी था। वहां पर उसका विकास रुक गया है। सखाराम के ध्यान में क्या यह सब न आता होगा? लेकिन मैं भी तो एकदम यह सब कैसे कहूं? और मेरा ना कोई घर है न दर। आज जेल तो कल बंदूक़ की गोली। मालती है वहीं भले सुखी रहे। एक मर्तबा उसने आंखें भर मेरी तरफ़ निहारा था। लेकिन उसकी दृष्टि में रहे मूक संदेश का ठीक अर्थ किसे ज्ञात हो सकेगा, कौन समझ सकेगा? मैं मालती को पत्र ९

ाराम घर नहीं होगा अतः उसके नाम पर प्रेषित पत्र
सी ने खोला भी न होगा। लिखूँ मालती को पत्र ? लेकिन
लखूं तो क्या लिखूं ? प्रिय संबोधन प्रयोग में लाऊं तो क्या
होगा ? संबोधन आजकल रुढ जो हो गया है। अब पहले जैसे
अर्थ की गहराई में कोई कभी नहीं जायेगा। और उसने एक
पत्र मालती के नाम लिखा।

प्रिय मालती,

सप्रेम वन्दे

प्रिय सखाराम वहाँ नहीं है क्या ? तुम दोनो यहाँ पर आओगे क्या ? ऐसा पिछले पत्र मैंलिखा था। यहां परसों से हड़ताल का श्रीगणेश होगा। मज़दूर वर्ग में उत्साह का वातावरण फैला है। जहांतक मेरा ख्याल है, हड़ताल प्रारंभ होते ही अथवा उसके कुछ पूर्व मेरी गिरफ्तारी होगी। सखाराम आ गया तो वह नेतृत्व कर सकेगा। आप भी आयीं तो मज़दूर-नारियों में अपेक्षा से भी ज्यादा उत्साह व धैर्य का निर्माण होगा। आपने मुझसे पूछा था, "मुझे क्या कार्य करना नहीं आयेगा ?" संयोग से मनमांगी मुराद पाई है। यहां कार्य का ढे लग गया है ढेर। सुनहरे मौक़े को वातों में न खोइये साधारणतय ऐसे मौक़े रोज़-रोज़ नहीं आते। जीवन में क्रांति निर्मा करनेवाले ये क्षण होते हैं, जीवन नव सर्जन होता अकस्मात हम ऊंचे उठते हैं मानो हिमकर, दिनकर और त मंडल से चर्चा करने लगते हैं सच है ना ? देखना। विचा सूचित कीजियेगा जो कुछ निश्चित करें सो। सखाराम नहीं है, उसके आते ही निर्णय सूचित करें। पहुंच कम से कम प्रेषित करियेगा। सबको सप्रेम वन्दन।

भाभीजी का आगमन हुआ क्या? जयंत, पारवी की बातें निरंतर मुझसे कहा करती थीं, लेकिन इनके निकट न होने से मन उदास अवश्य रहता होगा। घर सूना-सूना लगता होगा। बच्चे तो सुखी संसार के प्रतीक और घर की शोभा होते हैं। खैर, आपके पत्र का बेचैनी से इंतजार कर रहा हूं।

घना

मालती के नाम से भूल-चूककर भी कभी पत्र न आता था। उसकी न तो कोई सहेली और न ही बहन थी। उसके नाम पर पत्र आया। वह तो बावरी बन गयी। अवश्य उनका ही पत्र मेरे नाम आया? हां, मेरे नाम। भैयाने कैसा लिखा होगा भला। सिर्फ दो ही पंक्तियां होंगी अथवा फिर कोई मधुर भावनोत्पादक संदेश। लेकिन वे तो कामकाज वाले जो ठहरे उन्हें भला समय ही कहां प्राप्त होता होगा इधर उधर देखने के लिये भी? ऐसे व्यक्ति अगर अपने पीछे काम का लफड़ा लगा न ले तो वे चैन न मांगेंगे। वह आदिसे अंत तक उसका पत्र एक सांस में पढ़ गई। एक दफा, दो दफा नहीं तीन दफा पढ गई। जीवन मे क्रांति निर्माणवाले पल! सचमुच मेरे जीवन में क्रांति निर्माण होगी? घर से स्वप्न में भी बाहर न जानेवाली अबोध मालती मजदूरों की प्रचंड सभाओं में भाषण करेगी, उनके क्वार्टर्स में फिरेगी और उन्हें धैर्य बंधायेगी यह क्रांति नहीं तो और क्या? लेकिन क्रांति एकांगी नहीं होती बल्कि सर्वांगपूर्ण होती है। वह तो शतमुखी होती है। ये ही क्षण क्या घनश्याम के शांत-गंभीर सागर जैसे जीवन में हलचल पैदा न करेंगे? वह विविध तरीक़ों से विचार कर रही थी। और मेरे जीवन में क्रांति हो गई तो

वश्य उनके जीवन में भी हुए बिना न रहेगी ।

शाम को सखाराम बाहर गांव से घर लौट आया ।

“ भैया, इतने भी दिन कोई बाहर गांव रहता है भला ? उसने पूछा ।”

“ वहां अकस्मात ही मेरी तबीयत खराब हो गई । अब जरा ठीक हूं । व्यर्थ में ही तुम सबको चिन्ता न हो इस आशय से सूचित नहीं किया ।”

“ लेकिन चिन्ता थोड़े ही मिटती है भला ? कल बड़े भैया ने एक दाना भी मुंह में न रखा । उन्हें लगा कि तुम पुनः कहीं घर त्यागकर प्रयाण कर गये हो । सचमुच बड़े भैया का हम सब पर अपार प्रेम है । तुम्हारा व मेरा खर्च बड़े भैया को ही नाहक में उठाना पड़ता है–हमारे कारण उन्हें अत्यधिक दुःख होता है । मैं तो समय व्यतीत करने मात्र करती हूं ।” भैया, तुम्हारे उस सुन्दरपुरवाले मित्र का पत्र आया है । कल अथवा परसों से वहां मिल में हड़ताल प्रारंभ होनेवाली है । शायद प्रारंभ हो भी गई होगी । मेरे पत्र में वैसा थोड़ासा उल्लेख मात्र है । हमें उसने बुलाया है । जाना है क्या ? वे इन्तजार कर रहे होंगे ? तुम्हें जो कुछ लिखना है उन्हे कल लिख देना । तुम गये तो मैं भी अवश्य आऊंगा ।”

सखाराम ने आदिसे अंत तक घना का पत्र पूरा प लिया और उस पर विचार करता इधर उधर चहल क़द करने लगा । मालती भोजनगृह में थी । वह उसकी स करने गया । भाई बहन दोनो आपस में सलाह–मशवरा रहे थे ।

“ मालती, वहां जाना विपत्तियों से ख़ाली नहीं ।

आया तो जेल यात्रा करनी पड़ेगी। हमारा तो कुछ नहीं लेकिन फिर तेरा क्या होगा ? तेरी जेलयात्रा शादी में रोड़ा न बनी तो ठीक ...!" उसने कहा –

"मेरी शादी की आप क़तई चिंता न करें, मैंने पिछली ही मर्तबा नहीं कहा क्या ? परम पिता परमेश्वर ने कोई उदार हृदय साथी जीवन क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिये दिया तो उसके साथ विवाह बद्ध होना या आजन्म कुमारी का जीवन व्यतीत कर इसी घर में ही सेवा करने का मैंने दृढ़ निश्चय किया है। तुम मुझे साथ लिये बिना हर्गिज न जाना। मैं तुम्हें वहां बोझा नहीं बनूंगी। भैया, मालती में और किसी अन्य का संचार हो गया है। निर्बल, अधीर, भयभीत, मुखविवर्ण मालती की मृत्यु कभी की हो चुकी है। मैं तो नवमालती हूं। धैर्यशील दृढ़ निश्चयी, फूर्तिली और क्रांतिकारक मालती अब मैं हूं।"

"तेरी निडर वृत्ति तो मुझे तभी ज्ञात हो गयी थी, जब तुझे देखने वह मूर्ख-पागल आया था, और तूने उसे आड़े हाथों लिया था। मालती, तुझे अपने साथ ले जाने की हिमत नहीं होती। थोड़ी देर के लिये मान ले लाठी का स्वाद चखना पड़ा, गोलीबार हो गया, मारपीट हो गई, पत्थर लगा तो क्या होगा ? बड़े भैया क्या कहेंगे ? माताजी आसमान से क्या संदेश भेजेंगी ? तू पिताजी के आंखों का तारा थी। बचपन में एक समय माताजी ने गुस्सा हो तुझे जरा पीटा तो पिताजी दौड़े आये और मां से कहने लगे, "मुझे पीटो लेकिन मेरी बीटिया रानी को कदापि नहीं।" इन शब्दों ने गहरे असर काम का किया। फिर कभी भी मां ने तुम्हारी तरफ आंख उठा कर देखा तक नहीं। फिर तुम ही कहो, मैं भला कैसे तुझे अपने समक्ष गु पु

जलती अशांति की ज्वाला में जलने के लिये वहां साथ में ले जाऊं? भैया, मेरा सुख तुझे प्रिय है ना?

"यह भी कोई पूछने की बात है।"

"तो फिर इन्कार न करो, मेरी अनंत सुखनिधी सुन्दरपुर में है। उस मंगलमयी मूर्ति के सानिध्य में महाकाल के समक्ष भी निडर बन खड़ी रहूंगी।"

"और तेरी मूर्ति जेल की चहार दीवारी में जकड़ गयी तो–बंद करवा दी गयी तो?"

"मैं उस मूर्ति के उच्च ध्येय को दिल में बसा उसके सिद्धि के हेतु आग में भी हंसती हंसती कूद पड़ूंगी।"

बड़े भैया भी कभी के घर वापस आ गये थे। तीनो भाई बहन साथ में खाने बैठे। खाते-खाते सब बातों की चर्चा हो गई। दो दिन के पश्चात् भाभी आने वाली थीं। उनके आते ही मालती व सखाराम दोनो सुन्दरपुर की ओर प्रयाण करें ऐसा तय हुआ। और दूसरे दिन सखाराम ने अपना निर्णय पत्र द्वारा घना को सूचित कर दिया। मालती आनंद विभोर हो नृत्य करने लगी। उसका पिछले लम्बे अर्से से निस्तेज चेहरा अनोखी अदृश्य ज्योति से दैदिप्यमान हो उठा। कभी दृष्टिगोचर नहीं हुआ आज तक ऐसा मनमोहक सौंदर्य उसके अंग अंग में रम गया। दोनो भाइयों ने मन-ही-मन प्रभु से प्रार्थना की "सुखी हो अनंत काल तक।"

हड़ताल में

मजदूरों की प्रचंड सभा लगी थी। आज ही अभी मिल से वेतन मिला था। कुछ दिनों तक निर्बंध व्यवहार चल सकता था। वेतन प्राप्त होने के बाद ही हड़ताल प्रारंभ करने का निर्णय काफी सोच विचार के पश्चात् किया गया था। आज की सभा में हड़ताल-निधी के लिए रकम इकट्ठी की जाने वाली थी। परसों से हड़ताल जो थी। चालो में से प्रचार बहुत ही ज़ोर शोर से हो रहा था। सुन्दरपुर में एक ही हलचल थी। सभास्थल की ओर मजदूर व नागरिक पक्तिबद्ध जा रहे हैं। हम नहीं हटने वाले, हम हैं लड़ने वाले।"

और घना रंगमंच पर आया। तालियों के गगन भेदी कड़कड़ाहट से उसका स्वागत किया गया। बहुत ही देर हो गई थी। उसने आते ही सभा का कार्य प्रारभ कर दिया। गंभीर, पंटरी व्रिजलाल आदि मजदूर कार्यकर्ताओं के व्याख्यान हुए। सहसा व्याख्यान के बीच में एक ने खड़े होकर कहा, "मुझे कुछ बोलना है।"

धमाल शुरू हो गई।

"आईए अवश्य अपनी बात बतलाईए। यहां सबको मौका दिया जाता है। बिना रोक टोक के कोई भी बोल सक-

ए! इनका कहना हव लोग शांति से सुने।" घना ने कहा।

वह व्यक्ति रंगमंच पर आया। लोग उसे वासुदेव अण्णा ह पुकारते थे। आस पास के गांवों का निवासी न था वल्कि ह कोई दूर नगर शोलापुर की तरफ का था। वहां के भी कुछ नजदूर मिल में थे। उनका हड़ताल के प्रति विरोध था कुछ अंशो में। इधर मालिक-वर्ग ने मज़दूरों में भेद नीति के अवलम्बन में फूट डालने की कोशिश प्रारम्भ की थी। कोई कहता था कि उन्हें हड़ताल तुड़ाने के लिये वड़ी रक़म भी दी गई थी। वासुदेव अण्णा वोलने के लिये खड़े हुए।

"मज़दूर वन्धू भगिनियों, मैं तुम्हें अलग ही वात कहने वाला हूं। हड़ताल वड़ताल के झंझट में हमें न पड़ना चाहिए। तुम में से वहुत से आसपास के हैं। तुम लोगों की छोटे-वड़े प्रमाण में खेती वाड़ी भी है। तुम्हारे सगे संवधी भी यहीं निकट हैं। तुम लोग हड़ताल ज़ाहिर कर चले जाओगे लेकिन हम कहां जायें? शोलापुर ज़िला के हम जैसे उदरपूर्ति के लिये आए दीन मज़दूर कहां जायें? इसके अलावा हड़ताल यशस्वी तो न होगी मालिकों के कारिन्दे प्रत्येक गांव में घूम वेकार वेवसों की भरती कर रहे हैं। पांच पांच रुपये के नोट का लालच दिखा पहले से ही नाम लिख रखते हैं। तुम सब शांति-मार्ग से अहिंसात्मक ढंग से हड़ता जारी रखोगे? लेकिन नये आने वाले मज़दूरों को कौन माई लाल रोकेगा? निधि-निर्माण कर रहे हो वह दो-तीन दिन लिए ही काफी होगी ये नेता कहलाने वाले तो नौ दो ग्य हो जायेंगे अथवा जेल यात्रा करेंगे। वह भी 'सी' क्लास में वल्कि 'व्री' क्लास में। समाचार पत्रों में उनकें नाम

प्रशस्ति छपेंगी लेकिन हम सब तो मिट्टी में मिल जायेंगे। ऐसे नेता विश्वास घातक होते हैं। खैर, गर मान भी लिया जाये कि ये अन्य लोगों से नहीं हैं तो भी उनकी शक्ति ही कितनी? पांच दस हजार रुपयों की निधि भी जमा सकेंगे क्या?'मैं तुम लोगों में से ही एक हूं ("पैसे खाऊ! मजदूर-द्रोही! मालिकों का हस्तक" आवाज सभा में से सुनाई देती हैं) तुम कुछ भी कहो मैं तुम्हारी सबकी भलाई के लिए कह रहा हूं। (खींचिए तो नीचे ढकेलिए इस ओर! नमकहराम कहीं का) मुझे जो कुछ कहना था मैंने कह दिया है अब तुम सबों को जो अच्छा लगे करो।"

उनके नीचे उतरते ही धना बोलने के हेतु खड़ा हुआ उसने कहा –

"हम सब हड़ताल का निर्णय करने के लिए यहां एकत्रित हुए हैं। मैं अपना कोई भी निर्णय तुम लोगों मत्थे मढना नहीं चाहता। मुझे अपने नाम, कीर्ति व यश की कोई परवाह नहीं। मुझे यह सब नहीं चाहिए। मालिक-वर्ग के साथ तुम्हारी बात रह जाय - तुम्हारा सिर तन कर रहे - यही मेरी हार्दिक अभिलाषा है। इस दुनिया में तुम सब स्वाभिमान पूर्वक जीवन बसर कर सको - यही मेरा ध्येय है। आदि और अंतिम। तुम सब पर अन्याय हो रहा है, घोर अन्याय। और अन्याय का डट कर सामना करने का नाम ही सच्चा पुरुषार्थ है। तुम सब मनुष्य बनो। मैं अंतिम दौर तक तुम लोगों के साथ हूंगा। संभवतः मैं गिरफ्तार भी हो जाऊं तो मेरे अनन्य मित्र सखाराम अवश्य तुम्हारा साथ देंगे। वर्ना ब्रिजलाल है, पंडरी है, कुतुब है, धनजी है रामदास है – उनके बताये रास्ते पर चलना – आगे बढ़ना। आसपास के ग्रामों की कृषक-वर्ग आवाज देगा।

ड़े दिन तो यशस्वी तौर से मोर्चा दो। तुम में भी पानी है
ुम निस्तेज नहीं - ऐसा सब को ज्ञान होने दो मेरे पास तुम
लोगों को देने के लिए एक पाई भी नहीं है — सिर्फ इस घट
में एक प्राण है — और सयय आ गया तो इसे भी कसौटी प
लगा दूंगा, लेकिन तुम्हें दग़ा न दूंगा। मेरे मन में और ए
विचार के कभी से सुप्तावस्था में घर किये हुए है। पं
जवाहरलाल नित्यप्रति ही कहते है, साहस करना चाहिये,
नव-निर्माण करके जग को दिखाना चाहिए। मानलो कि हड़
निष्फल हो गई — मजदूर-वर्ग एक-एक, दो-दो कर काम पर
जाने लगे तो जिन्हें स्वाभिमान पूर्वक जिन्दगी बसर करने की
इच्छा है उनके लिये मैं एक नया प्रयोग योजन करने जा रहा
हूं। वहां इन्दौर की ओर मेरे एक धनिष्ठ मित्र है। वहां
ज़मीन भी वंजर पड़ी हुई है विना बोई। हम वहां नई वस्ती
का निर्माण करेंगे। सभी प्रकार के भेद भावों को तिलाञ्जलि दे,
वहां सर्व धर्म, सर्व संस्कृति, सर्व भाषा, सर्व जाति के साथ में
मिल परिश्रम कर सुखी ज़िन्दगी की बहारें लूटेंगे। वर्षों से
वंजर पड़ी भूमि को पसीने की सिंचाई से नंदन वन में रमनीय
स्थान मे वदल देंगे। एक नये इन्द्रलोक का निर्माण करेंगे।
इन्दौर मालवा प्रदेश यहां से कोई दूर भी नहीं है। तुम्हें वह
यसाँ स्थित अपने घर-द्वारों को छोड़ कर आना होगा। औ
यहां के घर वार भी कहाँ सुव्यवस्थित है। अंध कारासन्न य
की ये अंधकुप सी कोठरियां। हम सब एक नये जीवन की
डालेंगे। एक नव प्रयोग से दर्शन समस्त विश्व को करायें
सहकारी कृपि करेंगे घरोद्योग को विकसित करेंगे। छोटे
धंधे खोलेंगे। एक दफे अपने पैर पर खड़े होने के वाद

चाहिए ही क्या ? कुछ भी तो पराक्रम करेंगे ही । तीन शताब्दियां पूर्व इंग्लिस्तान के निवासी स्वतंत्र जीवन व्यतीत करने के लिए अमेरिका में स्थानापन्न होने गये थे। वहां उन्होंने घने जंगलों का जड़ मूल से सफाया किया और नई नई बस्तियों की निर्मित हुई । साहस के बगैर वैभव कहां से ? स्वतंत्र सुखी जियेंगे नव संस्कृति को विकसायेंगे । नव प्रयोग करेंगे । मन ही मन निश्चय कर रखिये । यहां विजय श्री हाथ न आई तो वहां अवश्य करेंगे । अब यहां के नागरिकों से दो शब्द कहना चाहता हूं ! मजदूरों का प्रश्न सिर्फ उनका अपना नहीं, बल्कि आप सबका है । अगर मजदूर हड़ताल पर चले जायेंगे तो आपका सब व्यवहार, सारा कारोबार क्षण भर में ठप्प हो जायेगा । होटेल, तांबुल गृह, रजत पट, सौदे बेचने वाली दूकानो आदि सबका हर्जा होगा । देह में कहीं थोड़ा सा बिगाड़ होते ही सारी की सारी देह विफल हो उठती है । ठीक उसी तरह तुम्हारा भी यह समाज शरीर है "तुका म्हणे एका देहाचे अव्यव" अर्थात् एक ही शरीर के सब कल पुर्जे हैं ।

आप अलग नहीं है इससे । अतः इस हड़ताल में सहयोग दे सहायता दीजिए । मैं आशा रखता हूं लेकिन यह सब तय तो मजदूरों को ही करना है । मैं कौन ? जहां तक आप मेरी बात अंगिकार करते हैं तब तक मैं हूं । मैं किसी पर अपने निर्णय लदवाने की अनाधिकार चेष्टा न करूंगा । समझाकर करना मेरी वृत्ति । तुम्हें हड़ताल चाहिए क्या ? न्यायार्थ मोर्चा देंगे क्या ? जय अथवा पराजय इसका सवाल ही नहीं उठता । लेकिन न्याय के लिए हमें तन तोड़ मिहनत-प्रयत्न करने ही चाहिए । कहिए, तुम्हें हड़ताल चाहिए क्या ? (हां हां । हमें

हड़ताल चाहिए मुक्कमल हड़ताल) तो हाथ उठाइए (असंख्य हाथ उपर उठते हैं) हड़ताल जिसे नहीं चाहिये, वे हाथ उपर उठायें ! (कोई हाथ उपर नही उठता) थोड़ी देर पहले के विरोधक क्या चले गये ? या वे भी सवका साथ देंगे ? और कुछ भी हो। यह निर्णय तुम सवनें मिलकर सर्व–सम्मति से लिया हैं। हड़ताल के लिये मदद चाहिए। आप हड़तालार्थ मदद दें। सभा समाप्ति के पश्चात यहां मदद भर कर जावें। फिर सव ठीक व्यवस्था होगी। हड़ताल की अवधि में जिसे सच्ची मुश्किलों का सामना करना पड़े सिर्फ वे ही सहायता मांगो! नन्हें वच्चों को लिए दूध वांटा जायेगा। ज्यों ज्यों हड़ताल की अवधि वढती जायगी, त्यों त्यों मुश्किलों की भरमार होती जायगी। वनिया उधारी से अनाज देना वंद कर देगा। हमें आसपास के ग्रामों में से जो कुछ धन–धान्य मिलेगा, सव के वीच समप्रमाण में वांट दिया जायगा। दाल कुरमुरे वांटेगे। आप सव निश्चित रहिए। आपकी मुश्किलें मेरी अपनी मुश्किलें हैं–और क्या कहूं ? खरी कसौटी का समय आगया है। पीछे न हटें आगे ही वढ़ें।
"जयहिंद"।

घना के अपील करने देर थी कि रुपयों की सभा मे बारिश होगई और तत्काल सभास्थल पर ही पाँच हजार व वड़ी निधि इकट्ठी होगई। ग्राम निवासियों ने भी परिस्थिर अनुसार खुले हाथ मदद दी। पार्वती की अंगूठी वहीं ' निलाम कर दी गई और संस्कृति–मंदिरवाले एक प्राध्याप महोदय नें उसी अंगूठी को दो सौ रुपयों में सहर्ष खरीद

मानों उसे संस्कृति मंदिर की पत्थर की चार दिवारी में संस्कृति के कतई दर्शन ही नहीं हुए। उसे सच्ची व उच्च संस्कृति के दर्शन तो इन बहुसंख्य फटे हाल मज़दूर में ही हुए। भीड़से एक आवाज़ ने उसे चार शब्द कहने की आग्रह भरी विनंती की। आखिरकार उसने उठकर अपनी मातृभाषा में मज़दूरों के सामने चन्द शब्द कहे जिसका सारांश यह था की— "संस्कृति तुम्हीं लोग समस्त विश्व को दोगे। सकल मानव हितैषी संस्कृति का जन्म अभी होता है? जिस संस्कृति के लिए आज अखिल विश्व हाथ बटा रहा है ऐसी संस्कृति है कहां? श्रमिकों को विश्राम मिलेगा, यथेष्ठ समय प्राप्त होगा, तभी तो वे संस्कृति संवर्धन करेंगे ना? राजाजी ने अभी परसों ही कहीं कहा, "समाजवादियों को काम नहीं उनका ध्येय तो बड़े बड़े तकियों पर लोटना है।" राजाजी जैसे विद्वान् व्यक्ति भी ऐसा कुप्रचार क्यों भला करते हैं? समाज वादियों के लिए तो श्रम सी कोई पवित्र अन्य वस्तु नहीं। और अगर श्रमिक वर्ग को जरा भी आराम मिला–कार्य से छुटकारा मिला तो वह जीवनोपयोगी अन्य आनंद प्राप्त कर सकेगा। वह खगोल शास्त्र का अध्ययन करेगा, पुष्पायन करेगा। वह शौक से संगित–शास्त्र व चित्रकला के अथाह सागर में गोते लगा जीवत का असीम आनंद लूटेगा। वह शास्त्रज्ञ बनेगा। राजाजी के द्वारा वर्णित व्यक्ति क्या चौबीस घंटे धुलि–कणों में लोटते है? मन चाही बक बक करते ही हैं वे हिम्मत ही कैसे? इस तरह का कुप्रचार आम जनता में करने की हिम्मत ही कैसे उनको होती है? श्रमिक वर्ग ही समाजवाद चाहते हैं। वे आलसी बनना कतई नहीं

हते वल्कि जीवन विकास व नव संस्कृति संवर्धन में हाथ टाने हेतु पूर्ण विश्राम चाहते हैं। वही सच्ची व उच्च प्रकार ी अखिल माननीय संस्कृति होगी। श्रमिक ही सच्चा धर्म ंगे सच्ची संस्कृति का निर्माण करेंगे, मानवता समता न्याय आदिकी स्थापना करेंगे। तुम्हें अपने महान् कार्य में विजय मिले।"

मज़दूर संगठन विषयक प्रचंड घोष करते सभा समाप्त हुई। घना के कमरे में इने गिने कार्य कर्ता इकट्ठे हो परस्पर सलाह मशविरा कर कोई कार्यक्रम निश्चित कर रहे थे। घनानें बावूसे कहा——

"वाबू, तुम्हारे जिम्मे मैं एक महत्वपूर्ण कार्य सौंपना चाहता हूं। तुम्हें इंदौर जाना होगा। अमरनाथ नामक मेरे एक अन्य मित्र वहां कृषि विभाग के प्रमुख हैं उन्होंने ही कुछ समय पूर्व अखवार में विज्ञापन छपवाया था कि जिन्हें नई वस्ती करनी हो वे सहर्ष आवें। इन्दौर रियासत उन्हें हर किस्म की सहायता विना किसी शर्त के प्रदान करेंगी। इन्दौर महाविद्यालय से ही उसकी व मेरी गहरी पहचान है। कृषि विद्यालय की उच्च परीक्षा अच्छे नम्बर प्राप्त कर उसने उत्तिर्ण की है। कितनी एक महान् योजनाएं उसके विलक्षण मस्तिष्क में हैं मैं जो पत्र दूं वह तू उसे देना। और प्रत्युत्तर लेकर आना। मैं जेल की चार दिवारी में वन्द हो जाऊं तो वह सखाराम को दे देना। लॉक-अप में मेरी मुलाकात लेने की अनुमति मिले तो वहीं आकर कहना।"

"मैं अवश्य जाऊंगा भैया।"

सचमुच हम नयी वस्ती की नींव रचें। नव समाज

निर्मिती का प्रात्याक्षिक प्रयोग कर दिखावें। एक वार किया गया प्रयोग सफल होते ही साधारण जनता में वेहद उत्साह निर्माण होगा। पारावार कठिनाई व मुश्किलें सफलता की राह में रोड़े वन आयेंगी। लेकिन हम कुछ करके दिखायें। अगर संयोग वश कल यहाँ मालिक वर्ग के सामने नाक रगड़ के जाने का मौका आया तो सचमुच वहां, भूमाता के ओठों पर नव-मुस्कराहट लाने के लिये प्रयाण करें।" पंढरी की आवाज सर्वत्र गूंज रही थी।

"मैंने तो उस वस्ती का सर्वोत्कृष्ट नकशा भी हृदयांकित कर रख छोड़ा है कभी का। मनकी सुनहरी कल्पनायें प्रत्यक्ष में जब साकार रुप धारण करेंगी तब की बात तब है।" घनाने कहा

अल्पावधि के पश्चात् वहां से सब मित्र अपने अपने ठौर चले गये। वहां सिर्फ घना अकेला अटूला रह गया था पीछे। भविष्य के गर्भ में क्या छिपा है – यही समझ में न आ रहा उसके। तभी वह चिंतित हो उठा उसने नाट्य-स्पर्धा में अपनी नाटिका भी प्रेषित की थी। पुरस्कार्य वह मन ही मन सोच रहा था नाटिका पुरस्कृत हो गई तो कितना अच्छा होगा। मालती सखाराम दोनो में से किसी का प्रत्युत्तर अभी तक नहीं। मुझ पर अप्रसन्न तो न हुई होंगी।? मुझ पर अप्रसनता तो प्रकट करने जितना अपमान क्या मेरे प्रति उनके हृदय में होगा? वह शय्या पर लम्वा हुआ। थकावट के मारे सारी देह दर्द कर रही थी। शीघ्र ही आंखें लग गई उसकी और जब वह उठा तव धूप चढ़ गई थी भगवान दिनकर कभी के पृथ्वी भ्रमणार्थ पूर्व दिशा से प्रयाण कर चुके थे। आज रविवार होने की वजह

से छात्र समुदाय की सभा बुलाई थी उसने । वह उन्हें हड़ताल के समय अवश्य ऐसा कार्य सौंपना चाहता था । विद्यार्थी-वर्ग को आसपास के गांवों में चंदा वसूली व हड़तालियों के पीठ में घुसेड़ने वाले मालिकों का षडयंत्र, वेकार हो वहीं अपनी जगह रोक, निष्फल करना चाहता था । वह उन्हें पढ़ाना था । उनके सह स्वच्छता सप्ताह मनाता । सब के लिए उसके हृदर में प्रेम कुट कूठ कर पड़ा था । आवश्यक कार्यो से निवृत्त हो वह धर्यशाला की ओर गया । जहाँ विद्यार्थी-समुदाय की सभा होने वाली थी । सभा में उसने विद्यार्थियों को सब बातों से अवगत किया । विद्यार्थी--वर्ग में भी सहायता एकत्रित करने का आदेश दिया । अपना जीवन व्यापक प्रश्नो से जोड़ देना यही सच्चे शिक्षण का ध्येय है ऐसा चर्चा के दौरान में उसने कहा । विद्यार्थी समुदायकों कई टुकड़ियों में विभाजत किया गया सब के साथ प्रचारो-प्रयोगी पत्रक, गीत नारें, आदि सामग्री दे उन्हें मोर्चे पर विदा कर वह घर लौटा । दरवाज़ा खोलते ही लिफ़ाफ़ा पड़ा नज़र आया उसनें उठाया और उत्सुक्तावश फाड़ा । मालती सखाराम दोनो के पत्र उसमें लख, आनंद विवल हो उठा । दोनो आने वाले थे । वह प्रसन्नता वारि में प्रफुलित हो नहाने लगा । निराधार हृदय को सहारा मिला मालती का पत्र छोटा लेकिन उल्लेखनीय था ।

प्रिय घनश्याम,

सुनहरे अवसर को हाथ से कैसे जाने दूं ? शतयुगों से क्षुधा पीड़ित, पिरसे थाल को भला कैसे सामने से हटायेगा ? ऐसी घड़ियां जन्म में वार वार नहीं आती । और मनीषा रखती हूं कि यही घड़ी मेरे जीवन में नव--क्रांति निर्माण करें । और

वह क्रांति करने वाला और कोई नहीं तुम्हीं हो, सिर्फ तुम्हीं!
मालती

आज कहीं भी शहर भर में आम सभा न थी। सारे कामों की व्यवस्था हो रही थी। प्रत्येक मजदूर मुहल्ले व चालों में समितियों की स्थापना की गई, जो हड़तालावधि मे सारी व्यवस्था रखने वाली थी। घना के अन्य साथियों के लिए यह सब एक नया शिक्षण था। संचालन कार्य के लिए आवश्यक। जिन्हें कल राज्य संचालन की धुरा हाथ में लेनी है। उन्हें इस से परिचित होना आवश्यक था। अनुभव यही सच्चा शिक्षक। कितनें एक वर्षों में जो ज्ञान हमें प्राप्त नहीं होता वह दो दिनो अल्पावधि में होता है। अनुभव महा-विद्यालय का महाज्ञान! रात्रि में घनश्याम अपने मित्रों के साथ बैठा हुआ था। मिल के अंदर कोई प्रवेश करने ही लगा तो रास्ते में सोजाना। फिर क्यों न कोई शरीर पर से मोटार लारी ही ले जाय, परवाह नहीं, यह तय हुआ। अपने को गिरफ्तार कर ही लिये तो वाद में सें सभी को किस भांति व्यवस्थित रूप से आंदोलन व दैदनंदिन कार्यक्रमों को कार्यन्वित करना चाहिए—आदि प्रश्नो के विषय में सविस्तार जानकारी देने वाला पत्रक घनश्याम ने लिख रखा।

"इसकी हजारों प्रतियां निकाल बाट दो ? उसने कहा।

"सखाराम आ रहे है ना ?"

"हाँ साथ में उनकी बहन भी आ रही है। वह नारी-वर्ग में समरस हो खूब कार्य करेंगी और हमारे आंदोलन को वेगमय बनाएगी"

"तब तो बहुत ही अच्छा! कब आ रहे हैं दोनों ?"

"कल संध्या को आ रहे है। कल की सभा में उनका भाषण रखेंगे। सभी से उनकी पहचान करा देंगे। सखाराम तो पूरा देवता है देवता। काम का भी उसे काफी अनुभव है। अगर मैं गिरफ्तार हो गया तो किसी वात कि चिन्ता न करना। अन्त में धैर्य और आत्म-विश्वास ही हमारे सच्चे मार्गदर्शक है। और हिम्मत, यही हमारी प्रिय सखी।" घनश्याम गम्भीर स्वर में कह रहा था।

"वावू अभी कल ही आखरी गाड़ी से गया है।" रामदास ने कहा। "अमरनाथ क्या कहता है यह भी देखें। वह है दिलेर आदमी। आठ–दस दिन तो हड़ताल चलेगी ही। आगे का नहीं कह सकते?"

"देखे तो सही। प्रकृति यही मनुज का आद्य कर्तव्य।" चर्चा विचारणा के पश्चात सभी कार्यकर्ता गण अपने अपने घर लौट गये। घनश्याम अभी कुछ लिख रहा था पता नही वह काव्य था अथवा पत्र। नहीं नहीं वे तो दो अलग–अलग पत्र थे मालती और सखाराम के लिये अगर उसे अचानक गिरफ्तार करलें तो। पत्र लिफाफे में वंदकर वह शय्याधीन होने जा ही रहा था कि रामदास ने दौड़ते हुए प्रवेश किया।

"रामदास वात क्या है?"

"सिपाही आ रहे हैं। तैयारी कीजिए। मुझे आदेश दीजिए।"

"तुम इसी कमरे में सोना। सखाराम और मालती को यही रहने के लिये कहना। ये दोनों पत्र उनके लिए हैं। तुम इन्हें अपनी जेव में रख दो। और शेष सभी कागज़ यहाँ से ले जाओ। व्यवस्थित रख दो। मैंने तैयार किये पत्रक

की हजारों प्रतियाँ आज ही रात निकालने का प्रवन्ध करो। कोई शांति भंग न करे वल्कि शांत रहे। जाओ ये सभी काग़ज़ लेकर।"

रामदास महत्व के सभी काग़ज़ ले कर चला गया। घनश्याम तैयार हो वैठा। उसने अपनी जेब में 'गीता' की प्रति रखी और तकली पर सूत कातने वैठा। अल्पावधि के के पश्चात् सिपाहियों का अपने अधिकारियों सहित आगमन हुआ।

"आइए, कल ही से आपकी प्रतीक्षा कर रहा हूं।" घनश्याम ने स्मित पूर्वक कहा।

अंत तक हमें यही लग रहा था कि आप हड़ताल की राह पसंद न करेंगे–"

"किन्तु जनाव, हड़ताल टालना तो मालिक-वर्ग के हाथ की वात है मज़दूर वर्ग के नहीं आजतक जोंक की नाईं वेचारों का शोषण करते आये हैं। भला उन्हें क्यों आप कृष्ण–मंदिर की यात्रा करायेंगे। वास्तव में अगर देखा जाए तो वे ही चोर हैं।"

"किंतु हमें तो कानूनानुसार सभी करना पड़ता है। आपकी तैयारी पूर्ण हो गई कपड़े - लत्ते जो आवश्यक लगें ले लीजिए।"

"चलिए गठरी तैयार है।"

कमरे वीचोंवीच दीवार पर टंगी हुई महात्मा जी के पूरे क़द की तस्वीर को उसने मन ही मन वंदन किया और चल पड़ा।

"कमरे को ताला लगायेंगे?"

नहीं, अभी मेरे साथी यहां आयेंगे।"

इतने ही रामदास का आगमन हुआ। रामदास की ओर निहार घनश्याम ने कहा – "अच्छा रामदास! सबको वन्दे मातरम्! मैं चला। शांति पूर्वक हमारा आन्दोलन चला हड़ताल सफल बनाना।"

"आपके आदेश का अक्षरश पालन करेंगे भैय्या।"

पुलिस के साथ घनश्याम चला गया। उसे तहसील के लॉकप में वन्दी बना लिया गया। अवैधानिक रूप से उसकी तलाशी ली गई। जहां उसे वन्दी रूप में रखा था उस कमरे को बाहर से ताला लगाया गया। घना लॉकप में चहल-कदमी कर रहा था देह सरकारी नोकरशाही के प्रतिनिधियों द्वारा वन्दी बनायी गयी थी पर मन विश्व में संचार कर रहा था। मानव-मन कहीं भी हो स्वतंत्र रह सकता है। वास्तविक रूप में मन का सदसद विवेक बुद्धि का एक स्वातंत्र्य स्वरूप है। वैसे तो इस विश्व में एक प्रकार से हम सभी परवश ही हैं। शास्त्रों की कितनी ही प्रगति हो जाने के पश्चात् क्षणार्ध में मूसलधार वर्षा होती है, भूचाल घटनायें भी दिन दहाड़े होती हैं, ज्वालामुखी फटते हैं, उष्णता की लहर मानव-मन को त्रयस्त कर देती है, और कड़ाके की ठंड पानी जमा देती है। ऐसे विचित्र संसार में केवल एकही स्वतंत्रता है और वह यह कि मैं अपनी सद्सद् विवेक बुद्धि के अनुसार चला हूं। विश्व [illegible]ीं रही पाशवी सतायें फांसी पे लटकायेंगी, बंदूक की गोली सीने [illegible] आरपार करवा देंगी। वे मेरे शरीर को मिटा देंगे; किन्तु [illegible]रे मन पर कौन हुकूमत चलायेगा? ज़ुल्मी क़ानूनो को हम [illegible]ाती ठोक कह सकते हैं कि तुम मुझे चीर डालोगे - मुझे [illegible]कड़े टुकड़े कर डालोगे; पर तुम्हारे अन्याय अत्याचारों के

सामने भूल कर भी मस्तक न झुकाऊंगा। घना उसी अलौकिक स्वातंश्य का अनुभव कर रहा था। सखाराम और मालती के स्वागतार्थ वह जा नहीं सकता, संपूर्णतः असमर्थ हूँ, अतः उसे दुःख हुआ। दोनों को पहनाने के लिए उसने सूत की माला कात कर तैयार की थी, गड़बड़ में उपरोक्त बात उसने पत्र में लिख रखी थी।

उसके कमरे में रामदास बैठा हुआ था। 'ये मालायें आने वाले साथियों के सन्मानार्थ' चिठी पर लिखा हुआ था। दूसरे साथी-कार्यकर्ताओं का आगमन हुआ। घना द्वारा लिखित पत्रक वे सायक्लो स्टाइल प्रतियां निकालने के लिए ले गये। रामदास ने कमरे की चीजों को ठीक से व्यवयित रूप में रखा और वह निद्राधीन हुआ इधर लॉकप में घनश्याम भी तन-मन को विश्राम देने के लिये खाट पर लेटा, लेटते ही उसकी आंखें लग गईं।

और इधर मालती उठी। सखाराम और वह दोनों आज की गाड़ी से निकलने वाले हैं। घनश्याम के लिए उसने ख़ास-तौर पर खाने की चीजें तैयार कर, साथ ली हैं और कुछ फल-फूल भी।

"भैया विदा दो।" बड़े भैया के पांव छू मालती ने कहा।

"तेरी भाभी आजाने के बाद जाती तो" बड़े भैया ने गंभीर स्वर में कहा।

"दो दिन तो उनके लिये रुक गई, अब और कितनी रुकूं? शायद वे वहाँ गिरफ्तार भी कर लिये गये होंगे। भाभी को नमस्ते कहना। जयंत, पारवी को मेरे चुंबन। और आप तबियत का ख्याल रखना। मेरी क़तई चिन्ता न करना भैय्या।

सब ठीक होगा । नई दृष्टि, नयी सृष्टि ! माँ का आशिर्वाद हमारे साथ ही है । "

"सखाराम चिट्ठी डालना, न भूलना । बाल-बच्चों को छोड़ मैं आ न सकूंगा, पर जाओ, अपने कार्य में सफलता पाना।" बड़े भैय्या कह रहे थे उनके स्वर में वात्सल्य का कम्पन था ।

"आपका स्नेह है तो सब कुछ है । "

सखाराम और मालती रेलगाड़ी में बैठे । मालती के जीवन में आज नव प्रयोग की नींव पड़ी नया प्रयोग । सखाराम सारे हिन्दुस्तान की खाक छान आया था । पर मालती ने तो कभी भूलकर भी चौखट के बाहर पैर न रखा था । आज वह फूली न समा रही थी, उसके उत्साह का पारावार न था । किसी एक स्टेशन पर उसकी दृष्टि रामफल पर पड़ी । उसने सखाराम से कहा–"भैय्या, लोगे क्या ? उन्हें रामफल की ही भेंट देंगे ।"

सखाराम ने रामफलों की सहर्ष खरीदी की । मालती ने उन्हें सम्हालकर टोकरी में रखा । वह खिड़की से बाहर दूर दूर तक दृष्टि गड़ाये देखने में तल्लीन थी । भला क्या देख रही थी ? गाड़ी पूरे वेग से अपनी मंज़िल की ओर अग्रसर हो रही थी । गाड़ी के साथ ही उसका विचार–चक्र भी गति पकड़ रहा था । उसका हृदय–पंछी कभी का उड़कर घनश्याम के निकट पहुंच गया था, पर मिट्टी देह को जाने में समय लगता है । अतः वह पूर्णतया असमर्थ थी ।

संध्यारानी व्योमरथ से उतर भूपरिक्रमा के लिये तैयार हो रही थी । सुन्दरपुर नजदीक आया । मिल दृष्टिगोचर होने लगी । नदी किनारे चिरकाल से अटल अचल उन्नत मस्तक

किये खड़े मंदिरों को निहार, मालती ने श्रद्धातिक्त हो भाव पूर्वक प्रणाम किया। गाड़ी की गति मन्द होती जा रही थी। और इधर मालती के हृदय की धड़कन पल-पल में द्विगुणित होती जा रही थी। घनश्याम से क्या बोलूं, कैसे बोलूं उसकी ओर कैसे निहारूंगी, हसूं अथवा गंभीर बनी रहूँ आदि अनेक अकस्मात उपस्थित हुए प्रश्नो का निराकरण खोज रही थी वह। किंतु निराकरण मिलता ही न था। उसे राह नज़र न आरही थी। वह सोच रही थी "कृत्रिमता क्यों-बनावट किसलिये?" हृदय में छुपाई भावनाएं-अरमान भले ही नयनों में तैरने लगें। सूर्य का दर्शन होने पर किस तरह विकसत होना चाहिये यह सुरजमुखी पुष्प-समुदाय अच्छी तरह जानता है। सुरजमुखी भला कौनसी पूर्व नियोजित योजना रखते है? बसंतऋतु के आगमन होने पर किस तरह 'कुऊ-कुऊ' मृदु ध्वनी से वन-उपवन गूंजा देना यह क्या कोकिला तय करती है? वह सब सहज होता है। प्रकृतिप्रध्त नियम निरंतर चलते ही रहते हैं। वह रहा स्टेशन। क्या ही भीड़ थी वहाँ? गाड़ी के पहिये सुन्दरपुर का प्लेटफॉर्म आते ही रुक गये। "मज़दूर वर्ग की विजय हो, घनश्याम जिन्दाबाद, सखाराम जिन्दाबाद।" आदि के तुमुल घोप से सारा स्टेशन निनादित हो उठा। किंतु घनश्याम कहाँ है? मालती के नयन स्टेशन पर की भीड़ में घनश्याम को खोज रहे थे सर्वत्र। उसे अपना निधान नहीं मिला।

"ये माला स्वीकार कीजिए। घनश्याम ने आपके लिये खासतौर से भेजी है। उसने स्वयं अपने हाथ से काते सूत की यह माला है।" रामदास ने सखाराम के निकट आ कहा।

"वह कहाँ हैं ?" मालती ने प्रश्न किया

"सरकार के आतिथ्य का स्वाद चख रहे हैं।"

"क्या उन्हें गिरफ्तार कर लिया ?"

"हां, कल ही शाम को।"

"और हड़ताल ?" सखाराम ने गंभीर वन पूछा।

"हड़ताल का आज प्रथम दिन है। कुछ मज़दूर अवश्य मिल गये थे पर वे भी अल्पावधि के पश्चात बाहर निकल आये। आज रात को प्रचंड सभा होने वाली है। आपके भी भाषण रखे हैं।" ब्रिजलाल ने कहा।

सहसा भीड़ में से एक लड़का सखाराम की ओर आरहा था। "अरे, कहाँ जा रहे हो, कौन चाहिए तुझे?" आदि प्रश्नों की झड़ी लग गई पर वह चुपचाप आगे बढ़ रहा था। निकट आ, सखाराम के चरणों पर झुक पढ़ा।

"कौन रुपल्या ? उठ ! पागल कहीं का। यों किसी के चरणों में नहीं गिरना चाहिए। राष्ट्र को अब किसी के आगे घुटने नहीं टेकने चाहिए। खड़े रहना चाहिए। गणा का स्वास्थ्य कैसा है ?" सखाराम ने उसे बाहों में लेते हुए कहा।

"अच्छा है।"

सखाराम और मालती का जुलूस धूमधाम से निकाला गया। यह भी एक नया ही अनुभव था मानो जिम्मेदारी अभी कंधे पर गिरना चाहती थी। स्थान-स्थान पर उसकी आरती उतारी गयी। "भला किस लिये हमारा सत्कार, सम्मान हमने क्या किया है ?" प्रश्न दोनो भाई-बहन के हृदय में रह-रह कर उठ रहे थे। लेकिन यह घना की तपस्या का फल था। वे दोनो उसके ही होने की वजह उसका भी सत्कार हो रहा

था। घना का कमरा आया। नारे लगे।

"भोजन के पश्चात् सीधे सभा में ही जायेंगे।" रामदास ने कहा।

"मैदिनी बिखर गई। सखाराम तथा मालती आवश्यक क्रियाओं से निवृत हुए। भोजन किया। थोरी देर के लिए मालती लेट गयी। सखाराम, सुन्दरपुर और हड़ताल के विषय में सविस्तार जानकारी प्राप्त कर रहा था। मालती ने घनश्याम द्वारा तैयार किये गये सूत के हार को हृदय से लगा मन ही मन कहा – "उन्होंने मेरे लिये हार तैयार किया। मैं भला कब उन्हें हार पहनाऊंगी? कल मिलने जायेंगे तब अवश्य पहनाऊंगी। और वह भी यही हार जो उन्होंने मेरे लिये तैयार किया था खासतौर पर। दोनो के लिए एक ही हार केवल एक हार। दो प्रेमी हृदयों को चिरकाल के लिए परस्पर जोड़ने वाला, जीवन ग्रन्थियों को सुदृढ़ करने वाला।"

सभा का समय हो गया। नागरिकों की भीड़ सभास्थल की ओर उमड़ रही। मजदूर वर्ग के उत्साह का ठिकाना न था। गीत पेवाड़ों का कार्यक्रम कभी का प्रारम्भ हो गया था। सखाराम और मालती मजदूर कार्यकर्ताओं के साथ सभास्थल पर जा पहुंचे। उनके स्वागतार्थ सभा में तालियों की प्रचण्ड कड़कड़ाहट हुई जयघोशों से व्योम गूंज उठा। व्रिजलाल ने श्रोताओं को दोनो भाई-वहन का परिचय देते हुए कहा –

"वाबू सखाराम सुन्दरदास वाले नन्कृति मंदिर में [illegible] दिन थे। पर जब उन्हें ज्ञात हुआ कि नन्कृति मंदिर का [illegible] खर्च मजदूर वर्ग की तनख्वाह में से काटी अमुक रकम से चलाया जाता है। तब ये वहां से चल पड़े त्याग पत्र दे [illegible]

के लिए इन्होंने फकीरीवृति का अवलम्बन किया है। मानव सेवा से ये विवाह बद्ध हुए। हिन्दुस्नान के प्रत्येक प्रदेश, शहर और भूमि को छान इन्होंने अलौकिक अनुभव-ज्ञान प्राप्त किया है हमारे नेता घनश्यामजी के ये अभिन्न हृदय मित्र हैं। और यह सुश्री कुमारी मालती देवी। उच्च शिक्षण प्राप्त हैं। यहां मज़दूर वर्ग को धैर्य बंधानें और उनके न्यायार्थ प्रारम्भ किये आन्दोलन-प्रवाह में गोता लगानें यहां आई हुई हैं। बाबू सखाराम इनके बन्धु हैं। दोनो ही माननीय मेहमान दो शब्द हमें कहेंगे। शांति से सुने।

ब्रिजलाल के स्वस्थान लौटते ही सखाराम ने खड़े हो सभा में उपस्थित सभी श्रोताओं को दोनों हाथ जोड़ नमस्कार किया और अपना वक्तव्य प्रारंभ किया-

"जाहिर में बोलना मुझे आता नहीं। भाषण देना मैंने सीखा नहीं। मुझे कोई सेवा कहे व कार्य की जिम्मेदारी मुझ पर डाले मैं अवश्य करूंगा। घनाश्याम के आदेशानुसार मैं यहां आया हूं।तुम सब न्याय के लिये कष्ट, भूख, बेकारी का सामना करने तैयार हुए हो यह देख, मेरा हृदय मारे आनन्द के झूम उठा है। जब मैं सेठ सुन्दरदास के संस्कृति मंदिर में था तक तुम लोगों में आज जैसी जागृति न थी। घनश्याम ने बहुत बड़ी तपश्चर्या की है। उसने पाखाने साफ किये, रास्तों में झाडू लगाये साक्षरता के वर्ग चलाये। तुम्हारे संगठन की नीव उसने सुदृढ कर, उस पर आज बड़ी इमारत खड़ी की है। आज वह कैद में है-बन्दीवास में है। अन्याय और अत्याचारों की नींव पर जमी नौकरशाही में न्याय के लिए प्राणार्पण करनेवाले देश के सच्चे सपूतों का स्थान कृष्ण

मन्दिर ही है। घनश्याम भले हो वन्दीवास में आज वन्द है पर उनका स्थान विचार तो तुम्हारे हृदय में हैं। उसी के आदेशानुसार हम भविष्य में आन्दोलन चलाने का प्रयत्न करेंगे।"

सखाराम के बैठते ही मालती भाषण देने खड़ी हो गई। प्रथम वह घबराई, विव्हल हो उठी। जहां दृष्टिपात करे वहां मनुज ही मनुज। किंतु सहसा उसमें स्फूर्ति का संचार हुआ, घबराहट कहीं भाग गई। उसने सुदृढ़ स्वरूप में कहा - 'भाइयों तथा बहनो में एक सामान्य नारी हूं। मुझ से बन सकेंगी उतनी सेवा-सुश्रूषा आप सब की निस्वार्थ भाव से करूंगी। तुम्हारी चालों का परीक्षण करूंगी। तुम्हारे फटे जीर्ण-शीर्ण कपड़े सी कर दूंगी। बीमारों को औषध दूंगी। तुम सभी के साथ जिऊंगी और मरूंगी। तुम सब हड़ताल पर हों। तुम्हें सहाय की आवश्यकता पड़ेगी ही। तुम लोगों ने पांच हज़ार का कोष इकट्ठा किया है। पार्वती देवी ने उसमें अपनी मुद्रीका दे अपूर्व उदारता दिखाई – यह भी सुना और में झूम उठी ! में ग़रीब हूं। पर मेरे दोनो हाथों में जो सोने का श्रंग है, कुमारीत्व के प्रतीक स्वरूप। उसे में तुम्हारे कोष के लिए देती हूं। तन - मन - धन अर्पण कर सेवा करनी चाहिये। ऐसा प्रायः कहा जाता हैं। ईश्वर तुम्हारे आन्दोलन को सफल बनायें। हड़ताल सफल होवे।"

उन चूड़ियों का वहीं पर नीलाम किया गया। कस्बे के एक अमीर युवक ने पांच सौ की बोली में उन्हें खरीदा। सभा में ही बहुतों ने हड़ताल–कोष में निज की शक्तिनुसार मदद दी। बड़े ही उत्साह के साथ सभा समाप्त हुई।

मालिक–वर्ग के पिट्ठू–कारिंदे मज़दूरों में फूट डालने का

जी–जान से प्रयत्न कर रहे थे। आस–पास के गांवों में रहे वेकारों को लालच दिखा भरती करने की पराकाष्टा की जा रही थी। किंतु ताहम फल दृष्टि गोचर नहीं हो रहा था। मालती और सखाराम मुहल्ले–मुहल्ले तथा गली–गली में घूम हड़ताल सफल वनाने को हड़तालियों को प्रेरणा देते थे। किसे क्या चाहिए, किस चीज़ की आवश्यकता है – इसकी वे निरंतर जांच करते रहते। वह देखिए वच्ची। उसका जंपर फटा हुआ है। मालती वहीं रुक गई और 'ठहरो तो तुम्हारा जंपर सी देतो हूं' मृदु स्वर में कहा। जेव से सुई-डोरा निकाल जंपर सी दिया उसने। उसके आस-पास मज़दूर-नारियों की भीड़ लग गई। उसे वे अपने सुख दुख की कहानी सुनाने लगीं।

होमियोपेथी का उसने घर वैठे–वैठे ही अभ्यास किया था। उसने कहा "कल मैं अपनी पेटी ले आऊंगी। इन वच्चों को दवाई दूंगी। मीठी दवाई।"

वहाँ झाड़ू हाथ में ले सखाराम चाल स्वच्छ करने में लग गया। और भी वहुत से हाथ वांटते लगे।

"शावाश वेटा! वास्तव में आप घनश्याम जी के मित्र ...प में शोभा देते हैं।" वृद्ध मतहारी ने शावाश देते हुए कहा।

"घनश्यामजी ने यहाँ पाख़ाने साफ किये थे और हम ...थ-पर हाथ धरे निरा देखते रहे।" मार्तंड ने कहा।

"उनकी केस का क्या होगा?" हरी ने पूछा।

"मैं आज उनसे मुलाकात करूंगा।" सखाराम ने ...त्तर दिया।

अल्पावधि के पश्चात् मालती और सखाराम अपने कमरे ...ौट आये। वहाँ घनश्याम का चर्खा–यंत्र टंग रहा था

एक खूंटी से। मालती ने उसे नीचे उतारा, साफ़ किया और सूत कातने लगी। सयय बीतते देर न हुग्रा। भोजन का समय हो गया — घनश्याम स्वयं ही पकाया करता था। बन्दी गृह में उसे भोजनालय से थाल भेजा जाता था प्रायः।

"मैं भोजन बना कर उन्हें भेजूंगी।" मालती ने कहा।

"व्यर्थ ही में भला क्यों कष्ट उठाती हैं?" रामदास ने कहा।

"यह कष्ट नहीं बल्कि आनंद है संतोष है मेरे लिए।" उसने उत्तर दिया।

"आप दोनो की हमने तो भोजनालय में ही व्यवस्था कर दी थी।" उसने कहा।

"भोजनालय चला क्यों? मेरे पास पर्याप्त समय है। यहां भोजन के लिए आवश्यक सारा सामान भी मौजूद है। भैय्या साग–भाजी बजार से ले आयेंगे। आप बुरा न माने अपने मन में। वुद्ध वही ही आया तो भोजनालय है ही।" उसने गंभीरता से कहा

रामदास जाने के बाद मालती ने चूल्हा सुलगाया। सखाराम दूसरे कमरे में बैठा कुछ लिख रहा था। थोड़ी देर के बाद रामदास ने साग–भाजी ला दी। मालती ने रोटी, साग चटनी बनाई। भोजन स्वादिष्ट बना था। अव्यवस्था दोनो को कतई पसंद न थी। उसने घनश्याम के लिये टिफीन भरा, घरसे लाई मिठाई भीं उसमें रखी और करंडक में के फल भी। सखाराम सब ले गया। और मालती रसोईघर साफ करने में लग गई।

"यह चिट्ठी उन्हें पहुंचा देना।" सखाराम ने द्वार पर खड़े हो कहा।

रामदास टिफिन लिये जब लॉकप में पहुंचा तब घनश्याम तकली पर कात रहा। रामदास को लख घनश्याम आनन्दित हो उठा। उसके होठों पर मुस्कराहट दौड़ गई। सिपाही ने द्वार खोला। टिफीन तथा करंडक घनश्याम को दिये गये।

"ये फल भला किसलिए?" उसने पूछा

मालती वहन आपके लिये घर से साथ लायी थी अत:।" रामदास ने प्रत्युत्तर में कहा भोजनोपरांत घनश्याम ने रामफ़ल काटा। उसमें से कुछ हिस्सा सिपाही तथा रामदास को भी दिया। काफी स्वादिष्ट था।

"अरे, हाँ! वावू सखाराम ने आपके लिये यह चिट्ठी दी है।"

"सिपाहीदादा को दिखा कर दे।" घनश्याम ने सिपाही की ओर दृष्टिपात करते हुए कहा दे दीजिए। कोई वात नहीं। उसमें लिखा ही क्या होगा? तुम सब सीधे-सादे लोग। वम फोड़तेवाले भले थोड़े ही?"

घनश्याम ने सखाराम की चिट्ठी आधोप पढ़ली। उसमें विशेष कुछ भी न था। वर्तमान स्थिति का संपूर्ण चित्रांकन किया गया था। रामदास ने पिछलें रोज़ हुई सभा का सभा वृतांत सुनाया। चूड़ियों वाली घटना भी उसने सुनाई।

"तुम लोगों की मुझे सेवा-सुश्रूषा करनी है। हाथमें सुवर्ण चूड़ियाँ रख, भला मैं किस भाँति कर सकूंगी।" मालती वहन ने अपनी वुलन्द आवाज में कहा था। व थोड़ा वहुत मज़दूर नारियाँ रो दी। सभा पर उनके भाषण की अमिट छाप पड़ी।

किंतु इधर मालिक–वर्ग मज़दूरों में 'येनकेन प्रकारण' फूट डालना चाहते हैं। मज़दूरों को अपने पैसे के वल पर खरीदना चाहते हैं। देखें क्या होता है आगे-आगे। पर परिस्थिति दिन–ब–दिन विषमता धारण कर रही है। अभी तो केवल आरम्भ ही हुआ है। सत्ता इसमें हस्तक्षेप करेगी ऐसा आज तो प्रतीत नहीं होता। यूनियन मिट जायगी ऐसा ही शायद सरकार और मालिक-वर्ग ने परस्पर मिल निश्चय कर दिया है।" रामदास ने सरोष कहा।

"इन्दौर से बाबू आयगा?"

"नहीं।"

"उसके आते ही मुझे सूचित करना।"

"आपके केस का क्या?"

"सुना है न्यायाधीश की बदली हो रही है। दूसरा जब जब इसके रिक्त स्थान की पूर्ति करेगा तभी केस निकलेगी।

रामदास चला गया। घनश्याम लॉकप में चहल कदमी करने लगा। करंडक में रहे बेरों को उसने चखा। हृदय–सिंधु में विचारों का तूफ़ान उठ रहा था। हड़ताल के विचार थे ही; बीच बीच में मालती की भोली मूर्ति भी दृष्टि गोचर होती थी कि सहसा उसके मन में एक नई कल्पना ने जन्म लिया। करंडक में चिट्ठी चपाती तो न होगी? उसने करंडक में से सभी फल बाहर निकाले पर चिट्ठी कहीं नज़र न आई वह लज्जित हो उठा। यों चोरी–चोरी, सखाराम की बहन चिट्ठी भला देगी भी कैसे? मेरा यह सोचना भी ग़लत था। मन स्वार्थी बनते ही दूसरी दृष्टि से विचार करने लगता है। वह अपने ध्येयवाद को अल्पांश में भी विस्मरण [illegible]

विचार लहरियों के थपेड़ों से परेशान हो उसने चटाई पर शरीर टेक दिया। और अल्पावधि के पश्चात् उसकी आंखें लग गई तीसरे प्रहर मालती और सखाराम उसे मिलने आये।

"पुष्पहार कंठारुढ होने के लिये लालयित है, ज़रा इस ओर मुंह फिराइए तो ?"

क्या यह तुम्हारा अपने हाथ का काता सूत ? उसने पूछा

जी हां !" सहास्य उसने प्रत्युत्तर दिया।

वाक़ई बहुत ही महीन, यह तो मेरा अपने सूत सा है।" घनश्याम ने प्रशंसा भरे शब्दों में कहा।

आपके हाथ और मेरे क्या अलग हैं ? आपने हमारे लिये रामदास के साथ भेजी माला, मैं आपके लिए अब यहाँ ले आई हूं। दोनो के लिए केवल एक ही हार बहुत है।"

सुना, कल आपने कोप में हाथ की सुवर्ण कंगन ही दे दिये ?

किन्तु आपने तो समस्त जीवन दे दिया है।

राखाराम ! तुम्हारे आगमन से मेरी सारी चिन्ताएं दूर हो गईं।" सखाराम को सम्बोधित करते हुए घनश्याम ने कहा।

"आप भैय्या को तो 'तुम' से सम्बोधित करते हैं और मुझे 'आप' शब्द से भला क्यों ?" मालती ने प्रश्नार्थ भरे स्वर में कहा।

"नारी सम्मान की अधिकारिणी जो ठहरी।"

"हमारे देश में बड़ी–बड़ी उपाधियां प्रदान कर तुच्छ मानने की वृति सर्वत्र है। रसोईए को महाराज कहते है और भंगी को मेहतर। मेहत्तर यानी महत्तर, महान्। सच है ना भैय्या ?"

"हाँ। मेहत्तर यानी महाराज ही।" सखाराम ने हंसते हुए प्रत्युत्तर दिया।

"हड़ताल के बारे में क्या ख्याल है?" घनश्याम ने प्रश्न किया।

"अभी तो प्रारंभ है। दस-बीस दिनो के पश्चात खरी कसौटी है। अभी तनख्वाह सभी के हाथ में खेल रही है धैर्य है। अगर महीने तक हड़ताल सफलता पूर्वक बनी रही तो फिर क्या? घर में फूटी कौड़ी नहीं होगी। और मोदी आटा-दाल भी उधार नहीं देगा और दुकानदार अपनी ड्योढी पर पैर न रखने देगा।"

"दुकानदार-मोदी सब उधार देंगे। वर्ना दुकानें लूटी जायेंगी यह भीति तो उन्हें होगी ही।"

"किन्तु वास्तविक सत्त्व परीक्षा तो आगे ही है। नारी-वर्ग कितने अंशों में अडिग रह सकेगा-यह एक प्रश्न है। बाल-बच्चे जो होते हैं। घर की सारी जिम्मेदारी उन्हीं पर होती है। रूखा सूखा ही क्यों न हो पेट की अग्नि शांत करने हेतु देना तो चाहिए ही? देखते हैं।
अरे, हाँ! तुम्हारे केस का क्या?" सखाराम ने घनश्याम से पूछा।

"ऐसा लगता है कि जब दूसरा न्यायाधीश ना आजाए तब तक कुछ नहीं।"

"मुझे तो ऐसा विदित हुआ है कि यही न्यायाधीश झटपट निर्णय दे देगा। मालिक-वर्ग ने काफी हद तक इसकी जेब गर्म कर दी है।"

"तो हम अपील करेंगे।" मालती ने कहा

"किन्तु दिन पर दिन तो व्यर्थ ही में बीते जा रहे हैं न। और यहां हड़ताल जो चल रही है।" सखाराम ने गंभ

बनते हुए कहा।

"जैसी प्रभु की इच्छा, वही होगा।" उसने कहा

नही, मानव की इच्छा।" घनश्याम ने मालती को सुधारते हुए बीच में ही कहा।

"प्रभु को आप क्यों नहीं मानते क्यों उनमें श्रद्धा नहीं रखते?"

"किन्तु क्या वही प्रभु तुम में मुझ में सर्वत्र व्याप्त नहीं? उस परम् ब्रह्म के विकास का एक स्वरूप अर्थात मानव। कभी किसी समय ब्रह्म पूर्ण होता है ऐसा नही। वह तो निरी एक कल्पना है। तुम्हारे-हमारे द्वारा ही वह मूर्तरूप धारण करती है। विश्व का लक्षकोटी पंखडियोंवाला पुण्डरिक, एक एक पंखड़ी खोल रहा है।"

"आप बहुत ही अच्छा बोलते हैं।" उसने कहा।

"और आप कार्य करती हैं।" घनश्याम ने प्रत्युत्तर दिया।

"और आप नहीं करते क्या? भैया, यहां से घर चले आये; किंतु आपने सुन्दरपुर को ही अपना कार्यक्षेत्र बनकार सेवा कार्य प्रारम्भ कर दिया।"

"मुझे कर्म यानी संकुचिन्ता प्रतीत होती है। कर्म यानी अनंत विचारों में से नीचे आना। नील गगन में मुक्त विचरण करने वाले निहंग का कीड़े-मकोड़े से लिए भूतल पर आना कर्म यानी बंधन, मर्यादा। मुझे विचारों के स्वच्छ आकाश में विचरण करना पसंद है।" सखाराम ने कहा।

"किन्तु केवल विचार-प्रवाहों पर ही अवलम्बित रह, ज़िन्दा नहीं रह सकते?" घनश्याम ने कहा।

मैं वृक्षों के पत्ते खाऊंगा, झरनों का पानी पिऊंगा। संस्कृत यानी जीवन में पाँच – पचास पदार्थों का संग्रह होना

यह तुम्हीं सबको लगता है; किन्तु मुझे ऐसा नहीं लगता। सिनेमा, आकाशवाणी, चोकोलेट, यानी क्या संस्कृति है ? शतबंधनों मे से तुम कितने अंशों में मुक्त हुए। इस पर तुम्हारी संस्कृति अवलम्बित है आकाशवाणी शौकिन प्राणी उसके बिगड़ने पर बेचैन हो उठता है। कारण उसका आनन्द उसी वस्तु पर अवलम्बित हो जाता है पूर्ण रूपेण। सहस्त्रों वस्तुओं के तुम लोग गुलाम हो। तुम्हें स्वातंत्र्य का अर्थ ही ज्ञात नहीं। शर्ट में बटन न होने पर, बाहर जाने में लज्जा प्रतीत होती है। वह बटन यानी क्या मेरे जीवन की उच्चता-महानता ? विवेकानन्द कभी बनियान पहनते; कभी साहब पोशाक में सजे होते। वे हमेशा कहते, वस्त्रों की गुलामी भला क्यों। मैं चाहूंगा वैसी पोशाक परिधान करूंगा। अमुक ही पहनिये ऐसा बंधन भला किस लिए ? सुख यानी वस्तुओं की सूची नहीं। सुख हमेशा विवेकवृत्ति मे ही प्राप्त होता है।"

सखाराम के वक्तव्य की ओर ही दोनो का पूरा ध्यान केन्द्रित था ! मानो वह संस्फूर्त हो यंत्रवत् बोल रहा था।

तुम लोग वस्तुओं के झंझट में पड़ दिन दुगनी रात चौगुनी वृद्धि कर रहे हो। किन्तु क्या उससे किसी के हृदय बड़े हो पाये हैं – विशाल बने है? उलटे और भी ज्यादा प्रमाण में संकुचित बने दृष्टिगोचर हो रहे हैं।" उसने पुनः कहा।

"भैया जाने भी दो ये सब बातें।" मालती ने कहा।

"सखाराम जीवन के लिए परमावश्यक वस्तुएं भी तो चाहिए ना ? अन्न, वस्त्र, घर ये तो चाहिए ही? हमारे मन का विकास क्षुधितावस्था में तो नहीं हो सकता ? विश्व संगीत के सम्मेलन में भाग लेने के लिए भी तो पेट भरा हुआ होना

चाहिए। महात्मा जी ने कहा था "पंछी सुवह ही सुवह में ऊपर आकाश में ऊंचा ऊंचा उड़ता है; किन्तु वह भी पहले दिन पेट भर दाना चुगा हुआ होता है।" ठीक है न?

"मेरा केवल यही कहना है कि वास्तविक संतोष हमें विवेक से ही प्राप्त होता है। अमेरिका में इतना सुख होते हुए भी वहाँ आत्म हत्याओं की भी कमी नहीं वल्कि प्रमाण अधिक मात्रा में है। वहाँ क्या अंतरिक समाधान–संतोप है? यह चाहिए, वह चाहिए। दौड़ादौड़। मनू ने प्राचीन काल में वहुत ही अच्छी तरह से सुखदुःख की मासिक व्याख्या कर रखी है :-

यत् यत् परवशं दुखं
यत् यत् आत्मवशं सुखं

जो दूसरों पर अवलम्वित वह दुःख और जो स्वयं पर वह सुख। गांधीजी यह वात कहते थे नित्य प्रति। चरखा गांवों में दुरूसा होगा। वह अमेरिका से कव आएगा - इसकी प्रतीक्षा करने की कोई आवश्यकता नहीं। अन्न और वस्त्र, जो हमारे जीवन की प्रमुख आवश्यकताएं हैं उनकी यथेष्ट पूर्ति स्थानिक मात्रा में करना हमें सीखना चाहिए। तभी वहुत कुछ अंशों में स्वातंत्र्य का अनुभव कर सकेंगे।" सखाराम ने कहा।

मुलाक़ात की अवधि पूर्ण हो गई। सिपाही ने सूचना दी। सखाराम और मालती घर जाने के लिए तैयार हुए।

"रोटी सागादि भोजन पसंद आया?" चलते चलते मालती ने पूछा।

"जव मेरे हाथ की वनाई रसोई का स्वाद चखेंगी तभी वास्तविक पता लगेगा कि कौन अच्छी रसोई वना सकता है?" उसने सस्मित कहा।

"आज तो पराधीन हैं - और हाथ का ही स्वाद लीजिए।"

"इस पराधीनता में भी एक प्रकार की स्वतंत्रता यानी मनोमय आनन्द का उपभोग कर रहा हूं।"

"अच्छा घनश्याम, जाता हूं।" सखाराम ने उसके कंधे पर हाथ रख कहा।

"अच्छा विदा दीजिए।" मालती ने नमस्कार कर कहा।

न्यायालय में आज घनश्याम का केस था। सारी गॅलरी तथा प्रेक्षक हॉल लोगों से भर गया था। न्यायाधीश महोदय निर्णय देंगे – यह अफ़वाह सारे कस्बे में हवा की तरह फैल गई थी मालती और सखाराम न्यायालय में उपस्थित थे। रामदास ब्रिजलाल, पंढरी मार्तंड, गंभीर आदि सभी मजदूर-कार्यकर्ता भी वहां आये हुए थे। पहिले से ही। अन्याय अत्याचारों को उत्तेजन बढावा देना, लोगों की धार्मिक-भावनाएं दुखाना आदि थे उस पर। घनश्यास ने दिये वक्तव्यों में से कुछ फ़िक़रे पढ़ कर सुनाये। सरकारी वकील का भाषण हुआ। उसने अपने वक्तव्य में कहा "अरे, इस प्रकार के वक्तव्य हर दिन हर कहीं देता यानी अत्याचारों को उत्तेजन देना ही है। तुम लोग मालिक--वर्ग को चोर कहते हैं। फिर दूसरा कोई कहेगा कि अगर ये चोर है तो इन्हें बदल दो। अपने शब्दों का परिणाम काफी दूरगामी होता है। मालिक-वर्ग यानी समाज को हुआ महारोग - भयंकर बीमारी, मालिक यानी काला विषधर नाग ऐसी अनेक उपमाएँ तुम्हारे भाषण में हैं। तुमने नाग कहा तो दूसरा नाग को कुचलने दौड़ेगा। बिचारा वह नाहक फांसी का फंदा अपने गलें में डालेगा। किंतु उसे ऐसी भयंकर बातें सिखाने वाला कौन? उसका मार्गदर्शक कौन?_

तुम, तुम सभी लोग शांति भंग करने वाले अपराधी !" इसी तरह के निवेदन वाला सरकारी वकील का लम्बा चौड़ा भाषण पूरा हुआ पूर्व निश्चित् पद्धति अनुसार गवाही आदि हुए।

घनश्याम ने अपनी पैरवी के लिए कोई वकील न किया था। उसने स्वयं अपनी पैरवी की। निवेदन में उसने बताया "मैंने मालिक–वर्ग को विषधर नाग अवश्य कहा किन्तु अगले वाक्य में यह भी कहा था कि विषधर नाग के अगले विषैले दांत निकाल दें तो वह एक निरूपद्रवी खिलौना अवश्य बन जाएगा। मालिक–वर्ग के हाथ में वही धन-संपत्ति की सारी सत्ता निकाल लेना उसके लिए रामबाण उपाय है। इसमें मैंने बुरा ही क्या कहा ? ये धनिक, कारखानेदार और मिल वाले इनमें मानवता का अंश तक नहीं। केवल लाभ उनका दैवत। समाज द्रोह का पाप वे अहोरात्र निरंतर करते रहते हैं। उन्हें बन्दीगृह का रास्ता क्यों नहीं दिखाया जाता ? समाज मे प्रचलित अशांति के वे ही मुख्य कारण हैं। आज शक्कर नहीं, कल गुड़ नहीं, परसों वस्त्र नहीं, राशन नहीं, मिट्टी का तेल नहीं, दियासलाई नहीं।

इन धोखेबाज़ों को सरकार क्या सज़ा दे रही है ? परम-पिता परमेश्वर के न्यायालय में भला कौन अपराधी सिद्ध होगा ? – कौन गुनाहगार घोषित होगा ? और कहते हैं कि मैं लोगों की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुंचाता हूं। धर्म का मर्म ही सब को सुखी करना है। और यही सच्चा धर्म हमारे देश के कोने कोने में और प्रत्येक समाज में व्याप्त हो जाना चाहिए- फैलाना चाहिए इसी लिये तो ये सब प्रयत्न हैं। हमें ही धर्मद्रोही के नाम से सम्बोधित किया जाता है! कैसा उलटा न्याय!"

न्यायालय में घनश्याम बाबू लगातार दो घंटे अविरत रूप से बोलते रहे मानो नव धर्म का सूक्षम निरूपण कर रहे हो सबके समक्ष। मानवता विपयक वह प्रबोधक प्रवचन था। उनको ऐसा भासित हो रहा था मानो न्यायालय में कोई सभा ही लग नही हो।

घनश्यामजी की प्रवचन के पश्चात न्यायालय में सर्वत्र शांति छा गई यदि सुई गिर जाएं स्पष्ट सुनाई दे जाय। न्यायाधीश ने शांति भंग करते हुए कहा—"मैं आपको निर्दोष घोषित कर, मुक्त कर रहा हूं। (जयघोषों के निनाद से न्यायालय का चप्पा-चप्पा गूंज उठता है। लोग आश्चर्य से दंग रह जाते हैं) गाँव में ऐसी बहुत सी अफवाहें उठी हैं कि मैंने रिश्वत ली है-मालिक वर्ग से निश्चित राशि ली है आदि किन्तु इस में से कोई अफवाह सत्य नहीं हाँ, अढलक संपत्ति का लालच दिखा, मुझे पूंजीपति कितनेएक और उनके प्रतिनिधि खरीदने अवश्य आये थे; किन्तु मैं अपने को उनसे अलिप्त रख सका; अपनी आत्मा को ज़रासी राशि के लिए कलुषित न होने दिया। यहाँ से जाते जाते ऐसी कोई बात मैं करना नही चाहता था जिसमें मेरी आजतक की प्रामाणिकता तथा सच्चाई पर पानी फिर जाए। पुलिस विभाग ने केवल भ्रष्ट होकर ही यह केस बनाया है, ऐसा प्रतीत हो रहा है। उन्हें भी रिश्वत का लालच दिखाया गया अथवा क्या, मालूम नहीं। किन्तु भविष्य में वे सत्य-मार्ग पर चलकर ही सरकार को ज्यादा अच्छी सेवा कर सकेंगे। अगर स्वयं वे ही असत्य मार्ग का अवलंबन करेंगे तो राज्य चलेगा ही कैसे शासन संस्था का नींव चुटकियों में ख

हो जाएगी । घनश्यामबाबू, आपके भाषण सुने हैं मैंने । आपने, हमारे जीवन से विस्मरण की ओट में भागती, शांती का अमर संदेश पुनः सुनाया है । सच्चा धर्म, सच्ची संस्कृति आदि विविध विषयों पर दिये गये आपके भाषण सुनने का अवसर मिला है । इन विचारों से समाज के संगठन में किसी प्रकार की रुकावटें आएंगी - मैं नहीं मानता । झूठे धर्म पर तो सभी संत महात्माओं ने जी भरके प्रहार किये हैं । धर्म की आड़ में क्लेष करनेवालों की उन्होंने कुत्ते साथ तुलना की हैं । मैं आपको निर्दोष घोषित करता हूं ।"

"महाशय, मैं आपका अत्यंत आभारी हूं ।" घनश्याम ने कहा।

न्यायालय के द्वार से घनश्याम बाबू का जुलूस निकाला गया । ऐसा जुलूस आज से पहले सुंदरपुर में कभी निकला न था । जगह–जगह और मुहल्ले–मुहल्ले के तुकडों पर घनश्याम की आरती उतारी जाती थी । अंत में जुलूस का रूप विराट सभा में बदल गया ।. मालती ने उसके अभिनंदार्थं, जो प्रवचन दिया वह निहायत उत्कृष्ट और सुन्दर था ।

" तुम अपना सौभाग्य समझो कि तुम्हारा भाग्यविधाता तुम लोगों में पुनः लौट आया है। कौए राजहंस को घेरने के अवसर में थे; किन्तु षडयंत्र का भंडा फोड़ हो गया । डाव फंस गया । न्यायाधीश महोदय ने न्याय की प्रतिष्ठा रखली । अब तुम अपने संकल्प की प्रतिष्ठा रख लो अंतिम ध्येय त हड़ताल रखो । शांति और आत्मविश्वास के शस्त्र सज आ बढ़ो । तुम सभी की तरफ से घनश्यामबाबू को हार अर्प करती हूं ।" और उसने घनश्याम के गले में ताज़े महक पुष्पों का बढ़िया हार डाल दिया ।

उसके बाद सभा में मजदूर कार्यकर्ताओं के भी घनश्याम बाबू के अभिनंदनार्थ भाषण हुए। घनश्याम ने उन सब का प्रत्युत्तर एक संक्षिप्त भाषण से दिया। तालियों की कड़कड़हट से गगनमंडल गूंज उठा। उत्साह की अद्भुत-ज्योति से सभी के मुख मंडल दीप्त हो गये। सभा बहुत ही उत्साह व आवेश में विसर्जित हुई। हड़ताल की नींव और भी सुदृढ हुई।

इन्दौर से अमरनाथ का पत्र ले बाबू आया। घनश्याम ने अतिउत्साहित हो पत्र पढ़ा और मारे खुशी के झूम उठा। आंखें नूतन आशा से चमक उठीं। मालती उसके मुखचंद्र को टकटकी लगाए हुए थी कभी की।

"सहसा यह खुशी कैसी !" उसने विस्मित हो प्रश्न किया।

"ध्येय-प्राप्ति की ग्रौर किसकी।" उसने मुस्कराते हुए कहा।

उसने नई वस्ती स्थापना की योजना सविस्तर सखाराम और मालती को समझाई। साथ ही इन्दौर से आया पत्र भी पढ़ कर सुनाया—

"घनश्याम, वाक़ई अगर हमने ऐसा कोई महद् कार्य किया तो अच्छा ही होगा। सर्व धर्म ग्रौर पंथ के अनुयायी एकत्रित हो सहकारी जीवन जीने का मजा ले सकेंगे, नव संस्कृति का विकास करेंगे ग्रपने तन, मन, धन ग्रौर परिश्रम से।" सखाराम ने प्रत्युत्तर में कहा।

"सखाराम, तुम मालती और कुछ मजदूर वहां प्रारंभ करोगे ? हड़ताल अयशस्वी रही तो यहां के मजदूर-वर्ग साथ ले मैं उस ओर प्रस्थान करूंगा, ग्रौर अगर यशस्वी होगई तो यहां की यूनियन का सारा कार्य, जिम्मेदारी किसी योग्य

सहकारी के कंधे पर रख यहां से मुक्त हो, वहां नये प्रयोग में हिस्सा वटाने हेतु आ मिलूंगा तुम पहले जाओ। नींव रखो। उक्त भूमिका ठीक तरह से निरीक्षण परीक्षण करो। वहीं पास में कल–कल नाद करती नदी भी वहती है। उसकी जलधारा का हमें अपनी योजना के लिये कैसे उपयोग होगा, उसका संशोधन करना। सचमुच; तुम जाओ ही।"

"आपको छोड़ कर?" मालती ने शंकित भाव से पूछा।"

"मेरा प्रयोग तुम सव के हाथों में है मसलन मेरी आत्मा भी तुम्हीं लोगों के पास; क्या यह वात ठीक नहीं? मैं तन, मन से तुम लोगों के साथ ही हूं। वहाँ जा जैसे वन सके वैसे वसुंधरा की सेवा में जुट जाओ।"

"किन्तु परिणाम–फल?"

"वह हम सभी पर प्रसन्न होंगी और आशीर्वाद देंगीं।"

"कैसा आशीर्वाद?"

"कोई यहीं। सुखी वनो; सफलता पाओ; नव–संस्कृति का विकास करो आदि।"

और वाकई एक दिन सखाराम, मालती, वावू, वंडू, वन्या, श्रीपत आदि लोग प्रस्थान कर गये इन्दौर के लिए। ध्येय प्राप्ति के लिए। सखाराम, मालती, और वावू तो नई वस्ती की नींव रखने का निश्चय कर ही गये थे। यहाँ हड़ताल चल रही थी शांति से। कहीं भी किसी प्रकार की गड़वड़ न थी। मालिक और मज़दूर; दोनो वर्ग अपने–अपने निश्चय पर अटल–अचल थे। और वहाँ नये प्रयोग का शिला-रोपण हो ही गया था।

नयी आशा नयी दिशा

हड़ताल प्रारंभ हुए एक माह की लंबी अवधि व्यतीत हो गयी थी। दिन-ब-दिन मजदूर वर्ग की परिस्थिति बदतर होती जा रही थी। आजू-बाजू के पड़ोसी गांवों से अन्न, धान्य, कपड़े आदि की सहायता प्राप्त हुई थी। लेकिन कृषक वर्ग के पास इन दिनों ज्यादा अनाज था ही कहां? और राशन का जमाना जो था। दुकान में से उधार मिलना प्रायः असंभव था। सब व्यवहार नक़द चलता था। और फिर राशनिंग में कौन उधार देगा? ठीक है, अन्य सामग्री तो कोई उदार हृदय व्यापारी बिना पैसे लिये दे भी देता था लेकिन राशन तो क्या, किसी के पास विष-पान करने के लिये एक पैसा भी नहीं था। हाँ, थोड़ा फंड अभी शेष था, जिस में से छोटे व रोगी मजदूर बच्चों को दूध दिया जाता। दाल-सेव, मुरमुरे, चने बांटने में आते थे। लेकिन समय रह-रह कर संकट और विपत्तियों की घोषणा कर रहा था। मालिक कुछ भी करने को तैयार न था उसे किसी की क्या पड़ी? और सरकार भी चुप थी — उसके भी कान पर चींटी रेंगती न थी। क्या किया जाय? यह एक ही प्रश्न प्रत्येक मजदूर व कार्यकर्ता के समक्ष था।

रात के समय निर्दिष्ट स्थान पर मजदूरों की प्रचंड

हुई। सब के चेहरे पर दीनता व निस्तेजता के दर्शन होते थे। लेकिन चेहरे की रेखाओं से आत्माभिमान टपक रहा था। उन की वातों से दृढ़ता टपकती थी। हाल-चाल में हिम्मत छिपी थी। घना ने वर्तमान समय की हड़ताल की पूरी परिस्थिति से सभा को ज्ञात किया। साथ ही उसने कहा, " हमारे पास ज़हर खाने के लिये भी पैसे नहीं हैं। फंड में की रक़म लगभग समाप्त हो गयी है। मैं भगवान-स्वरूप नन्हे बच्चों की दुर्दशा नहीं देख सकता। मेरा कलेजा फटता है नारी को खुले शरीर देखकर। आज ही मुझे इस आशय का तार प्राप्त हुआ है। कि मेरे नाटिका को पांच हजार का प्रथम पुरस्कार मिला है। मैं वह पुरस्कार मज़दूर फंड को अर्पण करता हूं। और पांच दिन जायेंगे। लेकिन अहम सवाल यह है कि आगे क्या ?

बंधु-भगिनियों, मैं आपके समक्ष एक साहसी योजना पेश करता हूं। आप सब सहकुटुम्ब - बच्चोंसह मेरे साथ चलोगे क्या ? किस लिये इस मिल में रहकर जीवन का सत्या नाश करते हो ? यहां मानवता का नामोनिशान नहीं, कदर करना कोई जानता ही नहीं, तो फिर यहां क्यों रहते हैं ? इंदौर रियासत में एक अच्छी जगह उपलब्ध हुई है। मेरे मित्र वहां का निरीक्षण करते आगे गये हुए हैं। वहां हम अपनी सब मिलकर नयी वस्ती वसायें। सोने व चांदी की खेती करें। उर्वरा भूमि है - सत्य का वोलवाला है। भरपूर अनाज पैदा होगा वहाँ हम छोटे प्रमाण में गृहोद्योग प्रारंभ करेंगे। शीघ्र ही विजली के सर्व साधनो का आगमन होगा। विजली की शक्ति पर वड़े वड़े यंत्र चलायेंगे। अन्य वहुत से कार्य करेंगे। एक सहकारी जीवन की निर्मित करेंगे - जहां आर्थिक, सामा-

जिक समता की स्थापना होगी। शिक्षण के क्षेत्र में नये प्रयोग दाखिल करेंगे। मानव के विशेषण से जीवन व्यतीत करेंगे हम सब। अन्य सब भेदाभेद, झगड़ों-रगड़ों को हमेशा के लिये ज़मींदोज़ कर देंगे। आयेंगे मेरे साथ? नवभारत भारतीयों के पूर्वोकालीन साहस वृत्ति की आज फिर अपेक्षा कर रहा है। विधायक साहस! सृजनशील साहस! यहां से गमन करते समय मन में दुःख होगा। पुरानी यादें सजीव हो उठेंगी – पुराने संबंध स्मरण हो आयेंगे। लेकिन एक दिन यह सब त्याग कर भी तो हमें जाना पड़ता है। पुरानी लकीर के फ़क़ीर बने तभी तो आज इस बुरी हालत में हैं। अपना गांव नहीं छोड़ना, रीति-रिवाज नहीं त्याग ने ऐसे से भला कहीं प्रगति होती है? जीवन में हमेशा सीमोलंघन करेंगे तभी हम परस्पर एक दूसरों को सब कुछ दे सकेंगे। पुरानी मर्यादा सीमाओं का दायरा पार कर आगे बढ़ना। नया क्षितिज, नये आदर्श। देखो, विचार करो। लेकिन मेरे नयनों के समक्ष तो आज भी सुन्दर स्वप्न, सुन्दर मूर्ति है। वह देखिये नयी बस्ती। सबों को निवास के लिये स्वच्छ, हवादार घर हैं। और बीचों-बीच में एक बड़ा चौक है। वहां हमारे स्वातंत्र्य का प्रतीक, तिरंगा फहरा रहा है। वह पाठशाला, और वह चिकित्सालय। वह रहा क्रीडांगण, और वह म्युझियम। वहां आलीशान-भव्य सभागृह है। और एक तरफ उद्योग-धंधों के केन्द्र बड़े बड़े कल कारखाने हैं। और वह देखिये, सार्वजनिक बाग़। एक व्योम के नीचे वहां सब स्वच्छा से परमपिता परमेश्वर की प्रार्थना कर रहे हैं!

सोच लो, फिर एक दफा अच्छी तरह सोच लो। यहां

हम कितना समय टिक सकेंगे। मेरे पास देने के लिये अब है ही क्या? प्रभु की असीम कृपा से यह पुरस्कार ऐन अवसर पर प्राप्त हुआ, जो आप सब मज़दूर-वर्ग के चरणों में समर्पित है।"

इसी तरह और आठ दिन पानी की तरह समाज के प्रवाह में वह गये। घना से स्वयं मज़दूर की दिन-ब-दिन बदतर होती परिस्थिति देखी न जाती थी। वह सब परिस्थिति उसके लिए सर्वथा असह्य थी। और वह भी कुदिन आया जब मज़दूरों को बिनशर्त अपती हड़ताल वापस लेनी पड़ी। क्षुधा-पीड़ित मज़दूर वर्ग पुनः काम पर जाने लगा। घना अभी भी मन लगाकर उनकी सेवा किया करता था। उसके लिये मन में श्रद्धा भरी पड़ी थी। बिना किसी बात का अथवा अपने भविष्य का विचार किये क्षणभर में उसने प्राप्त पुरस्कार उनके लिये दे दिया। ना कोई स्वार्थ, ना अहंकार!

घनाद्वारा योजित नयी बस्ती विषयक प्रचार ज़ोर-ज़ोर से चल रहा था। मधु व माधव नामक दो नवयुवक साथी और प्राप्त हुए थे जो स्वयं कृषितज्ञ थे। सखाराम का भी आशादायक पत्र उसे आया था। सुन्दरपुर स्थित कुछ मज़दूर जाने लिए तैयार भी हुए। आसपास के पड़ौसी गांवों में से भी कुछ उत्साही ग्रामीण जिनके पास रहने के लिये ठीक व्यवस्थित घर और पालन पोषण के लिये खेत नहीं थे, वहां जाने के लिए तैयार हुए। किसी ने अपने मां-बाप से उत्साहपूर्वक कहा, "वहां अच्छी तरह से आजीविका व निवास की व्यवस्था होते ही आपको भी ले जायेंगे तबतक यहीं रहिये।" नयी बस्ती में बसनेवाले इच्छुकोंकी सूची तैयार की गई। लगभग ५००

नर–नारी–बच्चे अलग। वहाँ जाने के लिए एक खास गाड़ी की व्यवस्था की गई। सूचना देने एक आगे गया। सखाराम ने सबके लिये वहां उत्कृष्ट प्रबंध पहले से ही कर रखा था। सबके लिए सार्वजनिक भोजनशाला की खास तौरसे व्यवस्था की गई थी। पीने के लिए नदी का जल लाया गया था। कुछ छोटी–बड़ी झोपड़ियां थीं और कुछ स्थायी रावटियाँ का भी प्रबंध था। वहां श्रमरनाथ ने औजार भेजे थे। गाय बैल वगैरा ढोरों की खरीदी की गई। मानों वहां गोशाला शुरू हो गई। व्योम चुम्बी पर्वत की तलहटी में वह जगह थी। पर्वत हरियाली से युक्त था। आसपास में व्योम में बातें करनेवाले वृक्ष थे। और एक वटवृक्ष का पेड़ तो कितना बड़ा। ढोर, गाय, भैंस सब उसकी शीतल छाया में विश्राम लिया करती थीं। श्रतिक थकित वहां सुख की नींद सोते थे। सखाराम व उसके साथी, इन सबोंने मिल वहां शुभारंभ किया। घना उसके साथ आनेवाले साहसी व्यक्ति इनका ठाट–बाटसे बड़ी ही धूम–धामसे स्वागत करने के लिए वे तैयार थे।

घना व उसके साहसी मित्रों को विदा देने के लिये आज विदाई–समारोह समस्त कस्बेकी तरफसे होनेवाला था। समारोह में भाग लेने विद्यार्थी–जगत् दौड़ पड़ा था मजदूर वर्ग भी आया था। विद्यार्थियों की तरफ से गजानन ने समारोह में भाषण देते हुए कहा, "घनश्याम को आज हम सब विदा कर रहे हैं। उनका सारा जीवन नित नये प्रयोगों के लिये है। [illegible] हम विद्यार्थियों को नयी दृष्टि व नवज्ञान प्रदान किया है [illegible] हमें पाठ्यक्रम में निर्दिष्ट विषय तो अध्ययन करते [illegible] लेकिन हमें गांवों की ओर ले जाते – वहां का रहन [illegible]

व नया दृष्टिकोण बताते और समझाते थे। वे स्वच्छता के हेतु हमें ले अवश्य जाते थे लेकिन जो गन्दगी उठाने अथवा साफ करने से हम घबराते, शीघ्र ही वे आगे आ उसे साफ करते थे। उन्होंने श्रम की प्रतिष्ठा कैसे की जाय यह बोध हमें दिया। दीन-दरिद्रों से समरस होना सिखाया। उनका नया प्रयोग पूर्णतया यशस्वी हो और हर्ष-पुलकित हम निरीक्षणार्थ जावें – यही प्रार्थना है।"

नागरिकों की ओर से शिवरामपंत बोले, "घनश्याम यहां से विदा हो रहे हैं। उन्होंने नागरिकत्व के पाठ हमें प्रत्यक्ष सेवा के रूप में पढ़ाये हैं। उन्होंने चिरनिद्रा में पड़े मज़दूर-वर्ग में जागृति का संचार करा। उनकी हड़ताल भले ही निष्फल गयी, लेकिन हड़ताल के दरमियान मज़दूर-वर्ग में जो शांति बनी रही उसका सारा श्रेय इन्हें देना चाहिये। खुद को प्राप्त पुरस्कार इन्हें असहाय मज़दूरों के क्षुधा से पीड़ित बाल-बच्चों के हित क्षणभर में दे दिया। किसी बात की लाज-शर्म के बग़ैर दाल-कुरमुरे मज़दूरों में बांटते रहे। दूध की बटलोई हाथ में थामे प्रत्येक के दरवाज़े खटखटाते रहे। इन्हीं की वजह से कस्बे ने साक्षरता को मन-वचन काया से अपनाया। किसान-पत्नियां कहीं कागद निहारते ही पढ़ने का प्रयत्न करती हैं। जहाँ घनश्याम का आगमन होगा वहां नव-चैतन्य का सर्जन होगा। उनका साहस-वृत्ति से भरा प्रयोग यशस्वी हो – यही शुभेच्छा।"

और संपत मज़दूर-वर्ग की ओर से घना के कार्य का गौरव करने सभा में खड़ा हुआ, हम में किसी बात की खूबी न थी लेकिन घनश्यामजी ने हमें मनुष्य बन, ज़िंदगी बसर

करने का बोध दिया। यद्यपि हड़ताल सफल न हो सकी। लेकिन जय–पराजय में से ही प्रगति–पथ का अन्वेषण करना पड़ता है। हम अपने संगठन को विशाल रूप देंगे – हम में अनबन–मत–भेद नहीं हुए तो उसे विस्तृत करेंगे – बल शाली बनायेंगे, मज़बूत करेंगे। हम में से चन्द मज़दूर बंधु लोभवश कर्तव्य–च्युत भी हुए।

किंतु कितना विशाल हृदय घनश्याम के सीने में है, जो उन्होंने भूल कर भी मज़दूरों को दोष नहीं दिया। उन्होंने यशापयश की सारी ज़िम्मेदारी स्वयं पर ही ले ली। भले ही वे आज नव–निर्माण की ओर प्रस्थान कर रहे हैं। लेकिन हम सब के मन तो प्रति पल उनके साथ ही रहेंगे। चन्द भाग्यशाली मज़दूर बंधु उनके प्रयोग में कंधे से कंधा भिड़ा साथ देने साथ में जा रहे हैं, सहर्ष जावें। उनके प्रयोग सफलार्थ आवश्यक रक़म हम भी भेजेंगे। श्रमिक वर्ग का मस्तक अभिमान पूर्वक–संसार के सामने ऊंचा बनाये रखने के लिये उनके प्रयोग यशस्वी होने के हेतु हमें तो सहायता देनी ही चाहिये।"

अरे! यह कौन खड़ा हुआ है बोलने के लिये? यह तो रुपल्या। वह खड़ा हुआ लेकिन कंठ अवरुद्ध हो गया। उसकी आंखों भर आयीं। उसने रुकते रुकते कहा, "सखाराम भाई, घनाभाई जैसे व्यक्तित्व वाले व्यक्ति कहां देखने को मिलेंगे भला? आज अथवा कल में भी जाऊंगा बसने, उनकी नयी बस्ती में। मेरा पिता गणा आज कल सख्त बीमार है। [illegible] जाने से मजबूर हूं। यह पुष्पहार घनाभाई के गले में [illegible] हूं। जब यें संस्कृति मंदिरों में थे तब हमेशा मुझे [illegible] बैठा खिलाया करते थे। उन्हें किसी बात का अभिमान [illegible]

उनके लिये सब मनुष्य बराबर हैं।" ऐसा कह रुपल्या घना के चरणों में लेट गया। सारी सभा गद् गद् हो उठी! सब के नैन हर्षाश्रु व शोकाश्रु से पूर्ण थे।

घना ने अंत में सब का प्रयुत्तर देते हुए कहा, "मैं अपने साथ आप सबों का प्रेम लिये गमन कर रहा हूं। ज़िंदगी के चन्द वर्ष यहां गुजारने थे। इस अवसर पर मैं मजदूर-बंधु व भगिनियों को सिर्फ इतना ही कहूंगा कि स्वयं मिट जाओ पर अत्याचार सहन मत करना हमारे देश में अहिंसा व शांति के मार्ग पर चलने से समाज-वाद का आगमन होगा ऐसी मुझे पूरी आशा है। विलम्ब अवश्य लगेगा। लेकिन धर्म न खोवें हम अपना। माना कि रक्तमय क्रांति से समाजवाद जल्दी ही आ सकता हैं लेकिन यह राह हमारी नहीं – हिन्द की नहीं। विद्यार्थियों को भी मैं यही कहूंगा, प्राप्तज्ञान जनसाधारण के हितार्थ सेवा रूप में समर्पित कर दें। इस देश को विभिन्न शास्त्र तज्ञों की सख़्त जरूरत है। लेकिन ज्ञान संपादन के पश्चात् बड़ी तनख़्वाहों की स्वप्न में भी अपेक्षा न धरिये। नाना शास्त्रों में प्रवीणता प्राप्त कर, सेवा करते आगे बढ़िये कुछ अपना जौहर दिखाइये। प्रयोग कीजिये। नागरिक वर्ग से कहूंगा सच्चे अर्थ में नागिरक बनिये। दूसरे के विषय में भी सोचिये। परस्पर सहकारी भावनाओं को आपस में बढ़ाइये। स्वच्छता-धर्म का आचरण जीवन में कीजिये। आप के गांव का मान अपमान, प्रतिष्ठा आपके व्यवहार व बर्ताव अवलंबित है। नाम सुन्दरपूर लेकिन कदम कदम पर कचरे के ढेर लगे हुए हो तो? यहां के निवासियों के सुन्दर आचार-विचार, रीति-रिवाज से क़स्बा सुन्दरपूर बनाइये। यद्यपि मैं

आप सब-से-दूर कोसों दूर जा रहा हूं फिर भी हर जगह आप सबों का प्रेम मुझे लाखों विपत्तियां आने पर भी बचाएगा और हरदम नव-स्फूर्ति का फव्वारा मेरे जीवन में छोड़ेगा।

समारोह समाप्त हुआ। रात में बहुत देर तक घना अपने मित्रों व सहकारियों के साथ बात-चीत करता रहा। दूसरे दिन सुबह दस बजे ख़ास गाड़ी छूटने वाली थी।

दूसरे दिन पौ फटते ही घना उठ सीधा रुपल्या के पिताजी से मिलने उनके यहां गया। गणा बिछौने में पड़ा कराह रहा था। घना ने उससे विदा ली; फिर संस्कृति मंदिर के मित्रों से वह सुन्दरदास से भी मिलने गया—सब के आश्चर्य का ठिकाना न था।

"तुम मिलने आये हो?" उन्होंने आश्चर्य से पूछा।

"हड़ताल कर, मालिक द्वारा मजदूर वर्ग पर किए जाने-वाले अत्याचारों से मोर्चा लिया। लेकिन यों तो इस जीवन में चलता ही रहेगा। आपके अमुक सिद्धांत मुझे पसंद नहीं हैं फिर भी आप में सज्जनता कूट-कूटके भरी पड़ी है। उसी सज्जनता को प्रमाण करने के हेतु आया हूं। आप उदार हैं और ज्ञानोपासक भी। लेकिन यह एक अलग बात है कि आपके औदार्य का रुख मजदूर-वर्गकी हित-तरफ नहीं है। मंदिर निर्माण करने के बजाय अगर मजदूरों के लिये चालें बनाते तो, अधिक प्रभुसेवा निसंपन्न होती, ऐसी मुझे सौ फी सदी आशा है। ख़ैर।

नमस्ते।"

"नमस्ते।"

गाड़ी का समय कभी का हो गया था। आज

सब संस्थाओं–मिलों आदि में सरकारमान्य छुट्टी जो थी। अग्निरथविश्रामधाम पर कमाल की भीड़–भाड़ थी। गाड़ी पुष्प-लताओं से सजाने में आई थी और डिब्बों पर 'नवभारत का नवसाहस' 'साहस में ही रही संपत्ति,' 'भारतीयों गांवों की ओर आदि विविध ध्येय–सूचक सूत्र अंकित थे। जन साधारण उत्साहित हो जयघोष कर रहे थे। मेल–मुलाकातों का भी यही समय था। किसी के नयनों से अश्रुधारा बह रही थी, तो किसी का मुखमण्डल उदासी के बादलों से मलिन हो उठा था। अग्निरथ–रक्षक ने हरी झंडी दिखाई। और नवभारत के सर्जन में जी–जान लुटाने जानेवाले साहसी भारतीयों को गर्वसे अपने सीनेपर बिठाए अग्निरथ चल पड़ा सुन्दरपुर से। धीरे–धीरे सुन्दरपुर कस्बा चिर परिचित नदी, घाट, मन्दिर, मिल और आध्यात्मशिक्षा–केन्द्र, वह संस्कृति–मंदिर आंखोंके समक्ष आये और एक एक करके दृष्टि से ओझल हो गये। गाड़ी द्रुत गति से दौड़ी जा रही थी मानो प्रवासियों का उत्साह उसके भी रोम रोम में संचार कर गया हो। नव भारत के साहसी नागरिकों ने गाड़ी में ही बैठे बैठे चिर परिचित मातृभूमि, इष्ठ स्थलों और श्रद्धांकित पदार्थों को विदा–वंदन किया। सबके नयन डबडबा आये। सबके उरोंमें हर्ष और शोक के मिश्र विचार थे उस समय। हर्ष इस बात का कि वे नव सर्जन की ओर कूच कर रहे थे और शोक इस बात का कि अपनी जन्मभूमि, रिश्तेदार–संबंधियों व अपनों से कोसों दूर जा रहे थे। फिर भी सारा भारतवर्ष उनकी मातृभूमि थी। जहां जायेंगे वहीं उनका ठौर।

गाड़ी में उत्साहमय वातावरण छाया हुआ था। कहीं

गायन वादन हो रहा था तो कहीं महाराष्ट्र के लोकप्रिय पोंवाड़ों की धूम थी। घना अपने पूर्व–जीवन की घटनाओं से सबको परिचित करा रहा था। औरतों ने भी निःसंकोच हो हो गायन–वादन में हिस्सा लिया। बहुत ही मजा आया। और वह चिर प्रतिक्षा स्थल भी आ गया, जहां पर सबको उतरना था। यहां से नयी बस्ती की ओर जाने के लिये रास्ता था। चन्द बैलगाड़ियां भी और एक दो मोटर लॉरियां। सबों का सामान–असबाव बैल गाड़ियों में ठीक तरह से रखा गया। लॉरी द्वारा प्रवासियों को नयी बस्ती ले जाने की व्यवस्था पूरी हुई। शेष रहों को दूसरे फेरे में ले जाना तय किया गया।

सखाराम ने घना को आलिंगन किया क्षण भर तक दोनों में से कोई एक शब्द भी न बोल सका।

"मालती कहां है?" घना ने पूछा।

पिछले दो दिनों से उसे बुखार ने घर दबाया है। सख्त परिश्रम रात दिन किया करती थी न। उसने गुलाब का पौधा लगाया था–और उसे पूरा आत्मविश्वास था कि तुम आओगे। तब तक एकाध गुलाब अवश्य कण्टकाकीर्ण–डालों पर मुस्करायेगा लेकिन अभी तक तो कली ही दृष्टिगोचर हो रही है। विकसित नहीं हुई अभी।"

रामदास, बाबू आदि ने हस्तान्दोलन किया और कुतुब और लाला ने 'सलाम अलैकुम' से घना को वंदन किया।

और वहां बस्ती में नये निवासियों के स्वागत की तैयारी बड़े जोर शोर से हो रही थी। नवागन्तुकों की हर्ष विव्हल हो आरतियां उतारी गयीं। उनके लिये भोजन तैयार था। प्रवासियों को उतार लॉरियां फिर से गयी और पुनः। ले आयीं

जैसे जैसे लोग आते जाते, भोजन करने जाते थे। आज सबको छुट्टी दे दी गई थी।

रात्रि के समय शीतल चांदनी की छाया में सब लोग इकट्ठे हुए कहा। घना ने सबको संबोधित करते हुए कहा, "भाईयों तथा भगिनियों, सबके लिए प्रथम झोंपड़ियां बांधना हमारा आद्य कर्तव्य है। झोपड़ी के लिये आवश्यक साधन-सामग्री कभी की आ चुकी है। नींव थोड़ी बहुत भर, उस पर झोपड़ियां बनाना प्रारंभ कर देवें। जंगल में बांस है ही, और बहुत बड़ी तादाद में लाने की इजाज़त भी हैं। हमें यह भी निश्चय करना है कि कितनी जमीन खेने योग्य है; फिर तो उसमें रहा कचरा-कांटे-पत्थर आदि सब हटाने पड़ेंगे। ट्रैक्टर हमें मिलने वाला है और हम सबों के चार-पांच सौ हाथ भी। भूमाता के उदर में जितनी गहराई तक घुसेंगे वह उतना ही अधिक फल देगी। टट्टियां बनाई हुई हैं पाखाने के लिये। अतः सब वहीं पाखाने के लिये बैठें। ओट है ही उस तरफ। ऊपर मिट्टी डालना कोई न भूले। सोनखाद का भी उपयोग कर लेंगे। अगर ठीक प्रमाण में डाला गया, तो अपेक्षा से ज्यादा अनाज पैदा होगा। गंदगी से नंदनवन का निर्माण हो सकता है। जो पैदा होगा वह सबकी मिलकियत का। किसी को भी शिकायत करने का समय पड़े, ऐसी कोई बात यहाँ घटित न होगी। नव-स्वर्ग को ही धरती पर ला खड़ा कर देंगे।"

मालती को अभी तक ज्वर था। सखाराम तथा घना उसके पास बैठे हुए थे।

"सोचा, आपको यहां आने की सुधि आती भी है अथवा नहीं।"

"सबकी योग्य व्यवस्था करना यह मेरा प्रथम कर्तव्य। एक मर्तबा और मैं यहां आके गया हूं। लेकिन उस समय मुझे ऐसा प्रतीत हुआ, तुम्हें नींद आ गई है। अतः धीरे से चला गया। कल ज्वर बिल्कुल उतर जायेगा–ऐसी मुझे पूरी आशा है।" घना ने कहा।

"वह कैसे?" उसने प्रश्न किया।

"मैं जो आ गया हूं, अब ज्वर अवश्य उतरेगा।" उसने उसकी आंखों में आंखें डालते हुए कहा।

और सचमुच दूसरे दिन मालती को ज्वर न आया। मानो जादू की लकड़ी घना ने फिरा दी और ज्वर कहीं भाग गया। नयी आई किसान बहू–बेटियों ने उसकी पूछ–ताछ की। पार्वती ने उसके पैर दबाये सहलाये।

"पार्वती तुम आ गयी?" उसने क्षीण स्वर में पूछा।

"आपके पास रहने आ गयी, जी जो न माना। खुली हवा में रहेंगे सब। खपें और खायें, प्रभु गीत गाते हुए आप पहिले ठीक हो जाइये। फिर बच्चों को पढ़ाइयेगा।" पार्वती ने कहा।

"मैं तुम लोगों के साथ मेहनत करूंगी।"

"यों बीमार होने के लिये? काम अवश्य कीजिये, पर पढ़ाने का।

"मैं खोदूंगी, बोऊंगी, फसल काटूंगी और जंगल में से लकड़ियों के गट्ठे अपनी बस्ती में तुम सब के साथ लाऊंगी।" ठीक, यह तो सब ठीक। पहले स्वस्थ हो जाइये।"

सब अपने अपने कार्य में मग्न थे कोई भोजनशाला में कार्य कर रहे थे। छोटे-छोटे बाल-बच्चे भी कार्य में लगे थे

थे। खाली कोई न था। सब का जो काम था वह। बीच में ही जंगली पुष्पों का गुच्छा हाथ में लिये घना मालती के पास आया।

"जाओ काम पर। यहां क्यों आये?" वह गुस्से हो बोली।

"जंगली पुष्प लाया हूं ये!"

"आप क्या जंगली है?"

"और तुम क्या नहीं हो।"

"मुझे आपने तुम कहके पुकारा। क्या ही फज़ीहत हुई! पुष्प कितने सुन्दर व मोहक हैं? आपको जंगली कह दिया, गुस्से तो न हुए? जंगल में नहीं रहते क्या हम? जंगल में मंगल करना है हमें, ठीक है न?"

"और दो दिन तक काम पर मत आओ। बीमार होना पाप है।"

"तुम्हारे निकट होते क्या मैं बीमार हूंगी? अमृत का कुंभ पास में रहते भला कोई मरेगा भी?"

"तू तो बड़ी कवित्री बन गई है।"

"यहां आच्छादित प्रकृति-रानी की मनहर छवि निहार कौन कवि न बनेगा भला?"

"हमें यहां घनधान्य निर्मिता सुन्दर काव्य-सर्जन करना है।

सारी बंजर भूमि उपजाऊ बना दो, फिर देखना कमाल! शक्ति की योग्य कसौटी कर काम हाथ में लेंगे। अच्छा, तो मैं जाता हूं। भूख के मारे मेरा बुरा हाल है।" घना चला गया और ठीक सामने से सखाराम भोजन कर आ रहा था।

"अभी तक तो ज्वर का नामोनिशान नहीं।"

"जाओ भोजन कर लो, तुम बीमार हो न जाना।" सखाराम ने कहा।

समय चक्र प्रकृति के नियमानुसार द्रुत गति से फिरता जा रहा था। सारी वंजर जमीन काम के योग्य बना दी गयी। सब्जी-तरकारियां लगाई गयीं। पेड़ पौधे भी दिन-ब-दिन विकसित होने लगे। सबों के चेहरे अदम्य उत्साह से देदीप्यमान लगते थे-

और व्योम में घनघोर घटायें वर्षा देव के आगमन की सूचना लिए आयीं। रानी-चंचला वर्षा-देव को रह-रह कर अपनी दमक से पृथ्वी माता की ओर ले जाने वाले पथ को प्रकाशित कर रही थी। मयूरराज अपनी वेली में वर्षादेव के आगमन की घोषणा धरावासियों को सुना रहे थे। वर्षा देव का पृथ्वी माता के प्रदेश में धूम-धाम से आगमन हुआ। पृथ्वी मां, वर्षा देव द्वारा वहाई प्रचंड जल धाराओं में नहा, पुलकित हो उठी। कृषक गण इंद्र का आभार मानने लगे।

सबों के दिल आनंद विभोर थे। अनाज दिन दुगुना रात चौगुना बढ़ने लगा। पुष्प बगीचों में विकसित होते थे और नन्हे-मुन्ने प्रायः उनसे आँख-मिचौली खेला करते थे। बड़े-बड़े मनुज अपने अपने काम और जवाबदारी में मस्त थे। स्वर्ग निर्मिति जो हो रही थी कलियुग में इस धरा पर!

इधर घना, सखाराम आदि बस्तीवाले सबों की आंखें देश में नित्य-प्रति घटित होनेवाली अच्छी, बुरी घटनाओं की ओर लगी हुई थीं। समाचार पत्र, नियमित रूप से वहां आता था। रात्रि को, दिन में घटित नयी घटना अथवा समाचार पत्रांकित बातों पर परस्पर चर्चा मशवरा हुआ करता था। 'देश दो भागों में बांटा जायगा' समाचार सबको बज्रघात-सा महसूस हुआ प्रथम। लेकिन घना ने उसके

पीछे रही पार्श्वभूमि व प्रत्येक उपस्थित कारण की मीमांसा ठीक तरह से कर सबको समझाते हुए कहा,

"आज अथवा कल यह प्रश्न सबके सामने देश के सर्वमान्य, सर्वपक्षीय नेताओं के समक्ष उपस्थित होने वाला ही था। कोटयावधि लोगों से भरे पड़े हिन्दुस्तान-से लंबे-चौड़े खंड को जहां अनेक जाति विचारों के व्यक्ति बसते हैं, कोई भला कब तक तलवार के ज़ोर पर रोक सकेगा? हमें पिछले हज़ार वर्ष की लंबी अवधि में एक होना आया नहीं यह बात सोलह आने सच है। संत-सन्यासी भिक्षु व श्रमणादियोंने, ध्येयवादी मनुजों ने प्रयत्न भी किये; लेकिन समंदर पार साम्राज्य सत्ता का यहां आगमन हुआ और उसने वो हमारे पूर्वजों द्वारा योजित समन्वय प्रयोग मिट्टी में मिला दिया। तोड़ो और फोड़ो-इसी कुटिल नीति पर तो साम्राज्य-शाही टिकती है। साथ में रह रोज़-रोज़ के क्लेशों के के बजाय अलग रहकर परस्पर में समभाव भ्रातृत्व प्रेम बना रहा तो अच्छा ही होगा। ऐसा गांधीजी का दृष्टिकोण होगा। दो विभाजित देशों में एक आत्मा, एक मन, एक विचार निर्माण करने के हेतु वे सारी शक्ति लगा देंगे। हमारे यहां जो मुस्लिम बंधु हैं, वे निर्भय-निडर बन अपनी ज़िन्दगी बसर कर सकें-ऐसा हमारा उनके प्रति व्यवहार होना चाहिए। हम भारतवर्ष के दस हज़ार वर्ष के एक कुटुम्ब के रूप में जीवन व्यतीत कर दिखाने के महान् स्वप्न को सिद्ध-सफल करने के हेतु प्रयत्न करें। अपनी इसी छोटी सी बस्ती में तो हम लोग ऐसा प्रयोग कर ही रहे हैं, उसे उर्वरा बनाने में रात-दिन एक कर रहे हैं यह ही नहीं बल्कि मनोभूमि की मशक़्क़त

भी कर रहे हैं। यहां लाला है, कुतुब है, अहमद है ठीक उसी तरह रामदास, बाबू, रघुनाथ आदि सब हैं। यहां अस्पृश्य हैं और स्पृश्य भी। हम यहां जातिभेद, वर्णभेद, धर्मभेद आदि सब भेदों से उस पार जा मानवता की नव स्थापना कर रहे हैं।"

१५ अगस्त १९४७! हिन्दी स्वातंत्र्य की घोषणा की गई। हिन्द नामक विभाजित प्रदेश में तिरंगा ध्वज ठौर–ठौर लहराया गया, फहराया गया। जंगल के पुष्पों व लता वेलिओं के तोरण सब ओर लगाये गये। नये लगाये बगीचे सब ओर में से कुछ पुष्प उन माला–तोरण में थे।

लेकिन थोड़े दिनों के बाद अनोखी बातें कानों में आने लगीं। शरणार्थियों की हृदय द्रावक घटनायें सुनते में आने लगीं सरे आम कत्ल–खून, घरोंको आग लगाना बहू–बेटियों की इज्जत लूटना आदि कु–खबरों सेसखाराम का हृदय रो उठा। देश में शांति की पुनः स्थापना होने के हेतु उसने लगातार तीन दिन उपवास किये। लेकिन उन्हें एक दिन अपनी बस्ती के पास ही विचित्र माजरा देखने को मिला। वह देखिये कुछ बैलगाड़ियां धीमी रफ्तार से जा रही हैं। कौन होगा उनमें? रामदास और बापू गये। उनमें पड़ोस के गांवों के दस–बारह मुस्लिम कुटुंब थे। वहां के ग्रामवासियों ने—"यहां से चलते बनो" ऐसा कहा। बेचारे निःसहाय जो ठहरे। कर भी क्या सकते थे। शेष बचा खुचा, सामान–गाड़ियों में भर कर जा रहे थे।

"कहां जाओगे?" सखाराम ने पूछा।

"अल्लाह को मालूम।" दुखः भरी आवाज से एक ने कहा।

"आप हमारे साथ रहिए। हमारे अन्य मुस्लिम मित्र भी यहां हैं। हम यहां सहकारी जीवन बिता रहे हैं,

भाई भाई वन गये हैं एक दूसरों को भाई मानो। परमपिता परमेश्वर ने ही आपको यह रास्ता सुझाया होगा। और दूर मत जाइये। देखिये न छोटे–छोटे वच्चे भूख से कुम्हला गये हैं।" रामदास ने सहानुभूति–शव्दों में उनसे रहा।

इतने में वहां लाला, कुतुव भी आ धमके।

"यहां ही रहना। ये सव दोस्त हैं। खतरा नहीं, धोखा, दग़ा नहीं। सवके साथ काम करना, मौज से रहना।" कुतुव ने उनसे कहा।

सखाराम व घना भी वहां पर आ गये सव मिल अपने वस्ती में ले आये। वहां उनका ठीक तरह प्रवंध किया गया। वच्चों को दूध पिलाया गया।

उधर महात्माजी देश में फैली अशांति की लहर को शांति–वांध के द्वारा रोकने की भरसक कोशिश कर रहे थे। हिंद में तुम सव शांति से रहो मैं संप्रदायाग्नि में पाकिस्तान को शांत करने वहां जाऊंगा। ऐसा वो सव को प्रार्थना सभा में नित्य कहते थे। स्वराज्य अवश्य आ गया लेकिन राष्ट्र की आत्मा के मुझे कहीं दर्शन नहीं हुए यों वे प्रायः दुःखित हृदय से कहते थे।

रोज़-वरोज़ घटित देशव्यापी घठनाओं से घना व सखाराम मित्र - द्वय दुःखित थे। लेकिन अपने दुःख को विस्मरण कर अन्यों के साथ हमेशा सख़्त परिश्रम किया करते थे। वर्षा ऋतु उतर गई थी। फसल अच्छी हुई थी। ज्वार, वाजरा और मक्का वोया गया था। साथ ही साथ रवी फसल भी वोयी गयी।। गेहूं चना भी वोया गया और शीतकाल में होने वाली गोभी आदि तरकारियां लगायी गयीं। ककड़ी व कुम्हड़े की

सरकारी अपेक्षा कृत बहुत पैदा हुए। एक कुम्हड़ा हंडिया-सा आकार में बड़ा था। टमाटर की बोआई बहुत ही अच्छी हुई थी। प्रत्येक क्यारी में सोन-खाद का खुले हाथों उपयोग किया गया था।

और एक दिन अचानक अमरनाथ का आगमन हुआ। वह नयी बस्ती के निवासियों के लिये पूज्य बापूजी का शुभाशीर्वाद ले आया था। अमरनाथ किसी कार्यवश देहली गया था। वहां पर अवसर मिलते ही घना व सखाराम द्वारा योजित नवप्रयोग की जानकारी उसने बापूजी को सविस्तर दी थी। मुस्लिम शरणार्थियों को किस भांति अपनों में ला बसाया वह भी कहा। उन्होंने नयी बस्ती को अपने अमूल्य आशीर्वाद भेजे थे। अमरनाथ ने भारतीय लौह पुरुष सरदार वल्लभभाई पटेल से भी मुलाक़ात की थी। बस्ती द्वारा सहकारी वृत्ति पर अवलंबित प्रयोग विलीनीकरण के पश्चात् भी शुरू रहना चाहिये। इस महान् प्रयोग को सरकारी तिजोरी से सहायता भी मिलनी चाहिये – ऐसा उसने सरदार से कहा था। प्रयोग वाली सारी योजना सुन स्वयं सरदार ने सब को साधुवाद भेजे थे। अमरनाथ यह सब कहने आया था। उसने कृषि की सारी व्यवस्थाओं का सूक्ष्म रीति से निरीक्षण किया। वह बेहद खुश था बस्ती वालों की सफलता और अपने मित्र घना का सुसंचालन देखकर।

रात के समय सब को एकत्रित कर उसने कहा, "समय बदल रहा है। राजा–महाराजाओं का सामंतशाही–युग नामशेष हो रहा है। इन्दौर आदि मध्य भारत की सब रियासतों को केन्द्र सरकार में विलीन कर एक नूतन प्रांत की रचना की जायगी। लेकिन जो भी प्रधान–मंडल आयेगा, तुम्हारे इस महान् प्रयोग

को सर्वतोपरी सहाय करेगा। देहली में उनको उच्च अधिका-रियों व राजकीय नेताओं से मुलाक़ात करके तुम्हारे प्रयोग की सविस्तर जानकारी उन्हे दी है। सवोंने एक आवाज़ में तुम्हें धन्यवाद दिये हैं। और तुम लोगों ने परित्यक्त मुस्लिम भगिनियों को अपने में समावेश कर लिया, यह सुन कर तो पूज्य बावूजी की आँखें आशा से चमक उठीं। तुम्हारे इस प्रयोग को उन्होंने शुभाशिष दी है। और क्या चाहिये? इसी तरह यहां कहिये। इसके साथ ही साथ हृदय–भू को भी अपने श्रम मे उर्वरा बनाइये। कृषि दो प्रकार की होती है। ज्वार, बाजरा गेहूं आदि की बाह्य; और प्रेम, दया, धैर्य ज्ञानादि की मान-सिक। दोनों की अपने श्रम से उर्वरा बनाओ। फिर देखना फ़सल कितना सुन्दर आती है।"

अमरनाथ चला गया। अल्प समय के पश्चात् बस्ती का प्रथम स्थापना–दिन आया। लेकिन देश की वर्तमान हालत को मद्दे नज़र रख, मनाया न गया। समय पानी की तरह बहता जा रहा था। और अकल्पित गांधी के उपवास, बम का फेंका जाना, और आख़िरकार राष्ट्र के पिता पू. बापू का एक भारतीय द्वारा खून, ऐसे हृदर विदारक समाचार एक के बाद एक आते ही गये। सब के मुंह दुःख से काले हो गये थे। लवों की हंसी सभी की अदृश्य हो गयी थी। एक दिन बस्ती के छोटे–बड़े सभी निवासियों ने उपवास किया।

सखाराम ने कहा, "शिवजी ने ज्यों गरल पान कर देवों को अमृत दिया, वैसे हीं गांधीजी ने हमें दुःख को भूल कर्तव्य-पथ पर निरंतर आगे बढ़ाना सिखाया है। वही हम रात दिन करते रहेंगे। अगर हम यहां ठीक तरह से जीवन व्यतीत

करेंगे तो वे हमेशा हमारे निकट ही हैं। ऐसा हमें अनुभव अपने आप होगा।"

चंद रोज़ तक बस्ती का वातावरण काफी उदास मय रहा। लेकिन धीरे धीरे सब अपनी-अपनी प्रवृत्तियों में रम गये। बस्ती निर्माण हुए को दूसरा वर्ष शुरू हो गया। मालती छोटे बालक-बालिकाओं को पढ़ाती, वह रात-दिन उनके ही साथ रहती, कहानियां सुनाती और गाना सिखाती थी। प्रौढ़ों को घना व सखाराम सिखाते थे। कोई निरक्षर न रहे ऐसा बस्ती संचालकों व निवासियों का दृढ़ संकल्प था। पार्वती ने मानो रट लगायी थी पढ़ने की। वह अब अच्छी तरह से समाचार पत्र पढ़ लेती थी।

बस्ती का रंग दिन-ब-दिन पलट रहा था। नवसृष्टि-नवसंस्कृति निर्माण हो रही थी। श्रमिकों, कृषकों, मज़दूर अपने उद्देश-पूर्ति के हेतु रात-दिन अविराम श्रम करने वाले ध्येयार्थी जीवो श्रम करो, मेहनत करो। तुम्हारी मेहनत-परिश्रम निष्फल न होंगे।

ध्येय–सिध्दि

बच्चों को साथ लेकर मालती जंगल में चली गई थी। बच्चे वृक्ष पर चढ़ रहे थे। गांवों से बाहर विस्तृत फैली वटवृक्षों की डालियों को थामे ऊपर चढ़ रहे थे। कोई फूल इकट्ठे कर रहे थे। कोई इधर उधर दौड़-दौड़ कर तितली रानी को पकड़ रहे थे। मालती मौन व्रत धारण किये, एक शिला पर बैठी हुई थी। वहां से लहलहाते खेत दृष्टिगोचर हो रहे थे। बाग़ बग़ीचे दिखाई दे रहे थे। वर्षों से बंजर पड़ी ज़मीन उर्वरा बन गयी, वहां आज नयी सृष्टि का निर्माण हो गया। लेकिन मेरा जीवन! मैं भी आजन्म ऐसी ही रहूंगी क्या? घनश्याम आख़िर विवाह क्यों नही करना चाहता? मैं उनसे पूछूं तो भी कैसे? मेरे मन की व्यथा, यहां कौन अपना है जिसे कहूं भी? उसकी आंखें भर आईं, उसे अपनी स्वर्गवासी माँ की याद आई। वह वहाँ, बच्चों के कलरव से अलिप्त एक तरफ आँखे बंद किये चुपचाप बैठी थी। और घना हाथ में पुष्पहार लिये उसके बिलकुल निकटस्थ खड़ा था। मालती ने आँखें खोलते ही घना को सामने खड़े देखा। उसका दिल क्षण-भर के लिए चल-विचल हो गया। लेकिन अपने को सम्हाल खड़ी हो गयी। परस्पर दोनो सामने खडे थे।

मैं अपना स्वयं बनाया हूं

उसने पूछा?

" मैं नित्य-प्रति ही अश्रु-हार पिरोया करती हूं और आज भी अभी यही काम कर रही थी।" उसने प्रयुत्तर दिया।

" मालती "

" हूं (क्या) ? "

" तुम मेरी जीवन सखी बनना पसंद करोगी ?"

" मैं तो कभी की बन गई। लेकिन तुम्हारे आदर्श तथा ध्येयों के बीच अवरोध बन, जीवन में रोड़ा अटकाना नहीं चाहती। मुझपर दया न खाइये !"

" तुमने तो मेरे हृदय पर विजय प्राप्त की है अपनी अथक सेवा-सुश्रुषा, त्याग व परिश्रम से। मैं कोई दया नहीं खाता; अभी कल ही रात्री में इसी विषय की सखाराम के साथ चर्चा की थी। उसकी सम्मति है। अबके हमारी नयी बस्ती का द्वितीय जन्म दिन धूम धाम से मनाना है। और इस बस्ती का नामाभिकरण भी पूज्य बापू के नाम पर 'मोहन-गांव' रखना है। इसी भव्य समारोह के सुन्दर मौक़े पर हम दोनों भी शादी के गठबंधन बधेंगे। तुम्हें पसंद है न ?

" मैं युगानुयुग भी इन्तज़ार में बिता दूंगी। "

" तो मैं जाऊं ? "

" कोई काम हो तो अवश्य जाईए। "

घना उसकी तरफ घड़ी भर प्रेम सूचक दृष्टि निहार चला गया। मालती ने घना द्वारा दिया हार अपने गले में पहना - हृदय से लगाया। वह आनन्द विभोर तन्मय हो, केयूर सी नृत्य करने लगी। छोटे-छोटे बच्चों में तन्मय हो उधम मचाने लगी। वह भी वृद्ध वट-दादा की लम्बी चोटी का सहारा ले अन्य बच्चों की नाई ऊपर चढ़ गई और मोदित मन से ऊंचे

ऊंचे झोंके खाने लगी। मानों उसका हृदय अमित आनन्दलहरी पर नाच रहा था। आज उसके हर्ष का पारावार न था।

वस्ती का नामभिकरण–समारोह वहुत ही धूमधाम से होने वाला था। 'अधिक ग्रन्न उपजाईये-' आंदोलन ये इस प्रयोग को पुरस्कार प्राप्त हुआ था। यहां सिर्फ अनाज ही अधिक मात्रा में उत्पन्न नहीं होता था। पंडित जवाहरलाल नेहरू का वहां ग्रागमन होने वाला था, लेकिन पूर्व नियोजित ग्रमेरिका-प्रवास की वजह से उन्होंने अपनी वहु-मूल्य शुभेशा भेजी थी। जयप्रकाशजी ग्रायेंगे क्या? घना ने उन्हें पत्र प्रेषित कर निमंत्रण दिया था और उन्होंने आने का वचन दिया था। सवको वहुत ही आनन्द हुग्रा। तीन दिन का विशाल कार्यक्रम तय किया गया था। नाटिका, भारतीय खेलों की प्रतिस्पर्धा, वनविहार और सहभोज ग्रादि नाना थे। जिस नाटिका को प्रतिस्पर्धा में पुरस्कार प्राप्त हुआ वह घना द्वारा लिखित दिग्दर्शित और अभिनित 'सच्चा प्रयोग ग्रर्थात् सच्ची संस्कृति' का अभिनय होने वाला था। नाटिका की रिहर्सल प्रारंभ हो गया था। रंगमंच तैयार करने का कार्य भी शुरु हो गया। प्रत्येक, अपने में रही अद्‌भुत कला के दर्शन साधारण जनता को कराने के लिए उत्सुक था। चूंकि उनमें नाना प्रकार के कलाकार तथा उत्साही कार्यकर्ता भी थे।

सखाराम के वड़े भैया भी अपनी सव घर गिरस्ती वेच-ाच कर इस वस्ती में निवासार्थ आ गये। वड़े भैया, भाभी, यन्त, पारवी आदि ग्रपने सगे-सम्वंधियों को एकत्र हुए लख, लती हर्ष से पागल हो उठी।

"ओ फुफी, तुम्हारी शादी?" पारवी हंसते हुए पूछती

और मालती उसे अपने निकट खींच चुम्बन देती हुई कहती "हाँ, मेरी बच्ची।"

"फिर तो मेरी गुड़िया-गुड्डे की शादी भी तभी करेंगे। चलेगा न?"

"हाँ–हाँ चलेगा।"

सुन्दरपुर के समस्त मित्र-समुदाय को आमंत्रण पत्रिकाएं भेजी गयी। मजदूरों के संगठन द्वारा, मजदूर-वर्ग को और विद्यार्थियों की यूनियन द्वारा विद्यार्थियों को भी पत्रिकाएं भेजी गयीं। यहां तक कि, सुन्दरदास सेठ जी को भी आमंत्रणिका भेजी गयी। और कमाल यह कि उन्होंने आना मंजूर भी किया। रामदास ने सेवादल का संगठन किया था। आमंत्रित अभ्यागतों के लिए छोटी-बड़ी झोपड़ियां भी तैयार की गयीं। सर्वत्र आनंद का वातावरण छाया हुआ था। नई बस्ती में प्रसन्नता की अखंड-धारा प्रवाहित हो चली थी।

और वह दिन भी गया, जिसका इंतज़ार, नई बस्ती के निवासी, घना, सखाराम, मालती, रामदास आदि बेचैनी से कर रहे थे। सुन्दरदास का आगमन हुआ। जयप्रकाश और प्रभादेवी पधारे। अभ्यागतों का स्वागत बड़ी ही सज धज से हुआ। स्वागत में किसी बात की कमी न रखी। [illegible] नाथ भी समारोह में सम्मिलित होने हेतु इन्दौर से खास [illegible] पर आया था। उसने समस्त योजनाएं जयप्रकाश-[illegible] प्रभावती आदि अभ्यागतों को ठीक तरह से दिखाई [illegible] कालिन योजनाएं भी। मुस्लिम शरणार्थियों के [illegible] पूरी जानकारी दी गई।

"यहां पर सब मानव के [illegible]

रहे हैं। मुसलमान भी प्रथम, वह मानव है फिर मुसलमान, इस बात को अच्छी तरह जानता-समझता है। व्योम ही जिसका गुंबद है। ऐसी मसजिद व मंदिरों में प्रत्येक बिना किसी रोक-टोक के प्रार्थना करता है" घना सब को समझा रहा था।

भोजन की सब चीजें वहीं की थीं। वहीं के केले व शकरकन्द को पीठ-कण में मिलाकर बनाई गई रोटियां बहुत ही स्वादिष्ट लग रही थी खाने में।

"उबाले शकरकन्द को ठीक तरह से पीस, उसे कण में मिला, बनाई गई रोटियां बहुत ही स्वादिष्ट होती है" मालती ने कहा। जयप्रकाश व अन्य अभ्यागतों के चेहरे मुस्कराने लगे।

रात्रि के समय नाटिका अभिनीत होनेवाली थी। ठीक समय पर सब लोगों ने रंगमंच पर अपना-अपना स्थान ले लिया। जयप्रकाशजी अपने नियत स्थान पर बैठे हुए थे। प्रभावतीदेवी भी उपस्थित थी। और सेठ सुन्दरदास भी। जन-साधारण में, घना और सखाराम के सुन्दरपुर वाले मित्र पड़ोसी गाँवों के ग्रामीण नर नारियाँ व नयी बस्ती के निवासी बहुत बड़ी तादाद में उपस्थित थे। घना ने अपने ध्येयों को सफल करने व मंज़िल तक पहुंचने के जो जो आज तक प्रयत्न किये थे वे ही सब नाटिका के रूप में पेश किये गये थे। उस नाटिका में सुन्दरदास अपने जीवन की झांकी भी निहार रहे थे। नाटिका के अंत में प्रधान-पात्र कहता है "यही हमारा नया प्रयोग", और यही हमारी नयी संकृति।

लोग अभी उठ भी न पाये थे कि घना और मालती दोनों ने रंगमंच पर प्रवेश किया। उनके साथ ही मालती के बड़े

कर्तव्य करते रहना चाहिए और यह सुन्दर आदर्श शादी ! न कोई धमाल, न विज्ञापन, न कोई, मालती-घनश्याम ! उनका उत्साह व फूर्ति लख, उनका जीवन-चरित्र श्रवण कर हृदय-कमल विकसित हो उठा। ऐसे ही प्रयोग करिये और सच्ची संस्कृति निर्माण कीजिए। जिस पर, समस्त राष्ट्र व राष्ट्रनेता अभिमान करें। जयहिंद !"